मूल्य : पन्द्रह रुपये (15.00)

प्रथम संस्करण 1980,
EKLA CHALO RE (Novel) by Dr- Bhagwati Sharan Mishra

एकला चलो रे

डा० भगवतीशरण मिश्र



राजपाल एण्ड सन्ज़, कश्मीरी गेट, दिल्ली

दार्जिलिंग की हिममंडित चोटियों पर सुबह की धूप सीधी पड़ने से वे सफेद से सहसा अंगूरी हो आई थीं। तीन मंजिले होटल की खिड़की से अपलक इन शिखरों पर दृष्टि गड़ाए विशाल, जैसे समाधिस्थ हो आया था। सुबह के ये ही कुछ क्षण हैं जो उसे बांध पाते हैं वरना अक्सर तो वह इस पर्वतीय प्रदेश में रहकर भी नहीं रह पाता। दार्जिलिंग की रंगीनियों और मनोरम प्राकृतिक दृश्यों के आकर्षण को चुनौती देता हुआ उसका मन, अब भी लगातार कलकत्ते की भीड़-भरी गलियों की खाक छानने दौड़ जाता है।

"गुड मॉर्निंग !" सुधीर ने बगल के बिस्तर में करवट ली है। उसकी यही आदत उसे पसन्द नहीं। स्वयं तो आठ-नौ तक बिस्तर में करवटें बदलता रहेगा और दूसरे का एक क्षण का एकान्त भी उससे सह्य नहीं होगा। अब क्या खाक बंधेगा उसका मन ?

"गुड मॉर्निंग !" विशाल ने खिड़की से हटकर जवाब दिया और धीरे-से जोड़ दिया, "बाहर चोटियां लाल हो आई हैं।"

"मेरी बला से !" सुधीर ने दूसरी करवट ली, "पर प्रोफेसर विशाल के मन के रंग का क्या हाल है ? चढ़ पाया दार्जिलिंग का रंग अथवा 'सूरदास प्रभु कारी कामरी'...।"

"चुप भी रहो।" विशाल ने एक ऊंह के साथ सुधीर के मुंह पर अपनी दाहिनी हथेली रख दी और उसकी रजाई एक तरफ सरका उसीके पलंग पर बैठ गया।

"एक बात बोलूं ?" विशाल ने आरम्भ किया।

"शौक से बोलो।"

"ये दूर तक विस्तृत पहाड़ियां, इनपर फैला हरियाली का यह मोहक साम्राज्य और फिर खुले आकाश में सफेद बादलों की यह भाग-दौड़। वह देखो तो सुधीर, वहां, वहां; अपनी मौज में भागता-गिरता, नीचे की ओर बह रहा वह फेनिल जल-प्रपात। किसी शोख मन की सारी अल्हड़ता को समेट भागा जा रहा है न !

सुधीर, हवा के हल्के झोंकों पर ही बादलों के टुकड़ों का टुक-टुक हो बिखर जाना मानव-मन की आकांक्षाओं और अभिलाषाओं की निस्सारता का ही तो······।"

"मैं सोचता हूं विशाल, कि दार्जिलिंग की इन पहाड़ियों पर आकर भी तुम्हारी दार्शनिकता तुमसे दूर नहीं हुई। बादलों का टूटना-मिटना, तुम्हें मानवीय सपनों की असहायता और क्षणभंगुरता का चाहे जो सूचक लगे, मुझे तो हवा और बादलों की छेड़खानी में किसीके साथ खेली, लड़कपन की आंख-मिचौनी याद आ रही है। मैं पूछता हूं कलकत्ता की व्यस्तता और ऊब से भाग निकलने का हमारा लक्ष्य यह तो नहीं था कि यादों के बोझ को हम दार्जिलिंग की उन चोटियों पर पहुंचा दें ?"

"खूब ! खूब !!" विशाल ने आसमान में बनते-मिटते बादलों से अपनी दृष्टि हटा, सुधीर के चेहरे पर गड़ाते हुए कहा, "अपने दिल के अरमानों के पूरे होने पर चारों ओर बहार ही बहार तो दिखती है सुधीर। क्यों न तुम्हें जंगली बांसों की यह चरमर भी शहनाई की गूंज की तरह मोहक लगे, पर कहीं तुम्हें भी मेरी तरह विवशताओं की बेड़ियों की कठोर जकड़न का अनुभव होता, तो पत्थर के ये टुकड़े तुम्हें भी कोयले के दहकते अंगारे लगते और तुम भी सदा इस भय से भयभीत रहते कि न जाने कब इन चोटियों पर फैले ये अंगारे तुम्हारे अन्दर के अधूरे सपनों की होली जला दें···।"

"सुधीर !" सुधीर को चुप देख विशाल ने ही टोका।

"चाय का ऑर्डर दूं ?" सुधीर कॉल-बेल की तरफ हाथ बढ़ाते हुए बोला।

"दे सकते हो, पर मैं एक गंभीर बात कर रहा था।"

"कितने दिनों तक गम्भीर ही बने रहेंगे आप ? कल दार्जिलिंग आए हुए तीस दिन हो जाएंगे।"

"यही तो मैं कह रहा था, यहां आने से कोई बात बनती नहीं दिखती। कलकत्ता मुझे छोड़ नहीं पाता। दार्जिलिंग मुझे बांध नहीं पाता। त्रिशंकु की हालत में लटका हूं। आखिर कब तक अपने से भागता रहूं ?"

"बात अपने से भागने की नहीं विशाल, अपनों से भागने की है। वे अपने जिन्हें आप अपना समझते हैं, पर जो आपको स्वीकारने को तैयार नहीं। अपने से भागने के लिए तो योगियों की ध्यान-मुद्रा ही पर्याप्त थी, अपनों से भागने के लिए पहाड़ियों की चोटियां चढ़नी पड़ी हैं !"

"भाषण तो अच्छा दे लेते हो !" विशाल के होंठों पर एक हल्की मुस्कराहट उभरी।

"करता भी तो यही रहा हूं। आपकी तरह दर्शनशास्त्र का व्याख्याता तो नहीं जो आत्मा-परमात्मा के विवेचन में ही समय कट जाता हो। यहां तो बाबर-हुमायूं की कहानी कहनी पड़ती है। पानीपत, पलासी की पूरी लड़ाई को पचास मिनटों में ही लेक्चर-प्लेटफार्म पर उतारना पड़ता है। फिर मेरे क्लास में कोई रेखा, मीना······।"

"सुधीर !" विशाल ने बीच में टोका।

"आदेश, हुजूर ?"

"सोचता हूं तुम्हारे साथ आकर मैंने भारी गलती की। तुम कभी सीरियस हो ही नहीं सकते।"

"तो जनाब को यहां किसी सीरियस व्यक्ति की आवश्यकता थी ? डाक्टर सुधांशु की सिफारिश थी कि आपके साथ कोई निहायत ही नॉन-सीरियस टाइप आदमी आए। यानी प्रोफेसर सुधीर, आपका क्लासमेट और कलीग, साथ-साथ आपका चमचा भी, वह भी स्टेनलेस स्टील का, जो आपकी हां में हां और ना में ना मिलाता रहे। समझे ? तो हो जाए एक-एक कप चाय इसी बात पर और इसके बाद बताइए कि कब तक रेखा देवी विदा ले रही हैं आपके मन-मन्दिर से, क्योंकि डाक्टर सुधांशु का कहना है कि जब तक रेखा रानी आपके भीतर बसी रहेगी तब तक आपके दिमाग की गाड़ी की पटरी से उतरने की भी पूरी संभावना बनी रहेगी।"

"पर तुमने तो रेखा को मेरे अन्दर बनाए रखने की जैसे कसम ही खा रखी है।" विशाल सुधीर के कप में चीनी का चम्मच डालते हुए बोला।

"यह कैसे ?"

"यह ऐसे कि रेखा मेरे मन में जितना रहती हो, तुम्हारी जीभ पर वह उससे कहीं अधिक रहने लगी है। यह भी कोई ढंग है किसीको भूलने देने का ? तुम उसे भूलने में मदद दे रहे हो या याद करने में ?"

"एक बात बोलूं बॉस ?" सुधीर अपने कप को होठों से लगाकर बोला।

"बोलो।" विशाल ने भी अपना कप उठाया।

"जादू वह जो सिर चढ़कर बोले। कम्बख्त, लगता है मुझपर भी चढ़ने लगी है। अगर ऐसा हुआ तो गजब हो जाएगा। फिर हम एक साथ यहां नहीं रह पाएंगे। एक पहाड़ी की चोटी पर होगा और दूसरा हजारों फीट नीचे, खाई में।"

"तो अपने बॉस की प्रेयसी पर भी तुम्हारी नजर है ?"

"प्रेयसी की ऐसी-तैसी। तुम्हारी तो छाया से ही वह भागती है। मैं उसे फांस सका तो उस शरद के जाल से तो वह छूट पाएगी वरना…।" सुधीर एक अर्थपूर्ण मुस्कान के साथ बोला।

"तो शरद का नाम भी तुम्हें लेना ही है ?" विशाल अपने प्याले को सहसा ट्रे में वापस रखते हुए बोला।

"सॉरी बॉस ! मैं तो भूल ही गया था कि शरद का नाम लेते ही आपके ब्लड-प्रेशर का काउंट बढ़ जाएगा, पर मुझे पता नहीं कि हम किस-किससे भागते रहेंगे ? रेखा से, शरद से, वीणा से…।"

"यही तो मैं कहना चाहता था। आखिर इस तरह हम कब तक और कहां तक भागते रहेंगे ? गलती की हमने कलकत्ता छोड़कर। जिनसे हम भागते रहे वे लगातार हमारे आगे दौड़ते रहे…।"

"एक सुझाव मैं दे सकता हूं ?"

"क्या ?" विशाल सुधीर के चेहरे पर दृष्टि गड़ाते हुए बोला।

"हम दोनों एक प्रतिज्ञा करें। आज से कभी भी रेखा हमारे बीच नहीं आए, न मैं कभी भूल से उसका नाम लूं, न तुम। ठीक ?"

"सुधीर, तुम्हारे भोलेपन पर ईर्ष्या होती है। मन में रहने वाला जीभ पर आने से रहेगा ? मन और जीभ के बीच कोई अर्गला तो है नहीं ! लौट चलो कलकत्ता। हो चुका डाक्टर की राय का पालन। मेरा स्वास्थ्य सुधरने के बदले और बिगड़ता जा रहा है। मन से जिसे निकालना था वह और गहरे घुसती गई है…।"

"विशाल, आइडिया !" सुधीर चहका।

"क्या ?"

"कांटे से कांटा निकलता है, सुना है तुमने ?"

"सुना है, मतलब ?"

"मतलब, घुसने दो और अधिक अन्दर इस कांटे को, दूसरे कांटे से इस कांटे को…।"

"सुधीर, तुम मुझे अच्छी तरह जानकर भी ऐसी मूर्खतापूर्ण बातें करते हो। बन्द करो यह पचड़ा। बोलो कब लौटते हो कलकत्ता ?"

"एक माह बाद।"

"क्यों ?"

"डाक्टर का प्रेस्क्रिप्शन है !"

"डैम प्रेस्क्रिप्शन, ऐंड डैम दैट डाक्टर सुधांशु। मैं अपना डाक्टर, स्वयं हूं।"

'हुजूर डाक्टर नहीं मरीज है और मैं मरीज का फेथफुल अटेंडेंट। मैं डाक्टर के प्रेस्क्रिप्शन का अक्षरशः पालन कराऊंगा।"

"तो इसका मतलब कि तुम एक महीने के पूर्व यहां से नहीं चलते ?"

"अवश्य चलता हू, यदि इस बीच रेखा देवी स्वयं कलकत्ते से कहीं और चल दें।"

"डैम यू। यू रिफ्यूज टू इम्प्रूव।" विशाल बिस्तर से उठते हुए बोला।

"सो आई डू।" सुधीर ने दूसरी करवट लेकर आंखें मूंद लीं।

दो

"आमि किछु जानि ना।" और झटक दिया रेखा ने वीणा के हाथ को।

कलकत्ता के एक कॉलिज का कॉमन रूम। लड़कियों के इस कॉमन रूम का वार्षिकोत्सव। रेखा और वीणा द्वारा इस उत्सव पर आयोजित नाटक में अभिनय। नाटक समाप्त होते ही वीणा द्वारा रेखा को छेड़ बैठना।

"आमि बोललाम, आमि किछु जानि ना।" (मैंने कहा, मैं कुछ नहीं जानती) और रेखा ने वीणा के हाथ को दूसरी बार झटका।

"मैं कहती हूं रेखा, तुम्हें बोलना ही पड़ेगा। तुम यों किसीको तबाह नहीं कर सकतीं। भगवान ने यदि तुम्हें रूप और गुण दिए हैं, तो इसका तात्पर्य यह नहीं कि तुम किसीकी बरबादी और विनाश का कारण बनो। माना तुम आकर्षक और अल्हड़ हो, पर तुम्हारी यह अल्हड़ता किसीकी जान पर आ जाए यह कहां की बात हुई ? तुम्हें सोचना पड़ेगा रेखा, सारी चंचलता और शोखी को छोड़कर सोचना पड़ेगा। तुम्हारी यह उदासीनता और अल्हड़ता किसीके विनाश का कारण तो बन ही रही है, अगर यही हालत रही तो याद रखो, एक दिन यह तुम्हारी सारी संभावनाओं को भी स्वाहा किए बिना नहीं रहेगी। तो तुम्हें बोलना पड़ेगा, रेखा, अभी बोलना पड़ेगा।" और वीणा ने छिटककर निकलना चाहती रेखा की राह रोक ली।

"आमि किछु जानि ना।" और तीसरी बार वीणा का हाथ झटककर रेखा कॉमन रूम के अन्दर घुस गई।

"आज का तुम्हारा अभिनय बड़ा अच्छा रहा।" रेखा को देखते ही उसकी तीन-चार सहेलियां एक साथ चिल्ला पड़ी।

"हां री। शकुन्तला के रोल मे तो तुम एकदम ऋषि कण्व की लड़की, वनवासिनी शकुन्तला ही लग रही थी। हा भई, भगवान ने बनाया भी तो तुम्हें अपने ही हाथो से है। लता-विटपों के मध्य अपनी सखियों मे बैठी तुम तारों के मध्य चाद की तरह खिल रही थीं।"

"हा री," एक दूसरी लड़की चिल्ला पड़ी, "जानती हो अभिज्ञान शाकुन्तलम् मे कालिदास ने शकुन्तला के लिए क्या लिखा है ? सुनो—

अनाघ्रातं पुष्पं किसलयमलून कररुहै,
रत्नाविद्धं रत्नम् मधुनवमनास्वादित रसम्।
अखण्ड पुण्याना फलमिव चतद्रुपमनघं,
न जाने भोक्तारम् कमिह समुपस्थास्यति विधि॥

'इसका अर्थ क्या हुआ री ?" तीसरी बोली।

"अर्थ तो खूब है री—

यह बिना सूंघे हुए फूल के समान है,
नख से बिना तोड़े किसलय के सदृश।
बिना छेदे हुए रत्न की तरह और
बिना चखे हुए मधु के समान।
अखंड पुण्यो का फल है यह।
इसके इस पाप-हीन सौन्दर्य को भोगने के लिए
भगवान ने न जाने किसे बनाया है।"

"मैं बताऊं री, किसे बनाया है···?" चौथी लड़की बोली।

"हा, हा, बड़ी आई बताने वाली···।" रेखा उखड़ पड़ी।

"जब अंगूठी के खो जाने से राजा दुष्यन्त उसे नही पहचान पा रहे थे, उस समय की इसकी मुखाकृति भी देखने योग्य थी। सचमुच रेखा, रेखा है।" एक अन्य लड़की ने जोड़ा।

"रेखा, रेखा है और तुम लोग क्या हो ? ख्वामख्वाह किसीको बनाने पर तुल जाती हो। मेरा अभिनय अच्छा हुआ या बुरा मेरी बला से, तुम्हारा क्या ?" कहती हुई वह बाहर निकल गई।

कॉमन रूम से बाहर निकलते ही रेखा पुनः वीणा से टकरा गई। वीणा, अपनी गाड़ी में घर जा रही थी। वीणा के साथ जाने का उसका कोई विचार नहीं था, पर फिर कॉमन रूम लौट वह उन उद्धत लड़कियों के व्यंग्य-वाणों का शिकार भी नहीं होना चाहती थी। लाचार, वह वीणा की गाड़ी में बैठ गई। उसे पूरी तरह अपने अधिकार में पा वीणा ने उसे फिर छेड़ा—"तुम नहीं बोलती रेखा?"

"आमि किछु जानि ना।" रेखा का वही उत्तर था।

"पहली बात तो यह कि तुम मुझसे बंगला नहीं बोलो। बंगला बोलना ही है तो अपने उनको सिखाकर खूब शौक से आजीवन बंगला बोलना। दूसरी यह कि तुम्हें आज बताना ही पड़ेगा कि मैं जो कुछ कह रही हूं वह ठीक है या नहीं?"

"नहीं, नहीं, सौ बार नहीं। लो अब हिन्दी ही बोलती हूं और यह भी बोलती हूं कि इस हृदय में अब तक न कोई आया है न कभी आएगा।" रेखा अपनी स्वाभाविक शेखी के साथ बोल गई।

"हृदय में कोई आए न आए, किसीको बुलाना तो पड़ता ही है रेखा," वीणा ने आरम्भ किया, "आखिर यह आकर्षण, यह उम्र और यह रंगीनी दुबारा तो नहीं आती। जो केवल अपना ही बना रहा, वह जिन्दगी का आनन्द क्या जाने? त्याग और बलिदान का आनन्द कुछ और है। पाने से कुछ कम आनन्द खोने में नहीं। अपना सब कुछ किसीको सौंपकर, मनुष्य जिस आन्तरिक तुष्टि और निवृत्ति का अनुभव करता है वह तो अनुभव की ही बात हो सकती है···।"

"बस-बस," रेखा ने वीणा का हाथ पकड़ लिया, "मुझे यह सब अच्छा नहीं लगता—लुटाना, सौंपना, बलिदान होना···नहीं···नहीं···मुझे तुम्हारा यह दर्शन नहीं चाहिए।"

"तुमने मुझे गलत समझा रेखा!" वीणा रेखा के प्रतिवाद की चिन्ता किए बिना बोलने लगी, "सब कुछ सौंपने और लुटाने से मेरा मतलब वह नहीं जो तुम समझ रही हो। मेरा मतलब हार्दिक तथा मानसिक पक्ष से है, शारीरिक से नहीं। शारीरिक त्याग तो आसान है रेखा, मानसिक या हार्दिक कठिन। शारीरिक त्याग में तो आदमी सब कुछ देकर भी कुछ नहीं देता, हार्दिक त्याग में कुछ नहीं देकर भी सब कुछ दे देता है। शरीर तो ऐसा है कि यह सब का होकर भी किसीका नहीं हो सकता। पर, मन जहां किसीका एक बार हुआ, वह फिर किसी और का होने से रहा। शारीरिक समर्पण तो रेखा, क्षणिक और आकस्मिक है—मानसिक सम्बन्ध तो स्थायी और शाश्वत। शारीरिक त्याग

द्वारा भले ही किसी क्षणिक दायित्व से मुक्ति मिल जाए, पर जहां किसीके हो जाने का प्रश्न है वहां तो शरीर का महत्त्व अत्यन्त ही गौण है।"

"तो तुम्हारा मतलब है कि प्यार में वासना का कोई स्थान नहीं ?" रेखा कुछ आश्चर्य से बोली।

"बहुत अच्छा प्रश्न है रेखा और साथ ही स्वाभाविक भी। पर, अब तुम्हारा घर भी आ पहुंचा है, शेष बातें हम वहीं करेंगे।"

इस समय रात के दस बज रहे थे। रेखा ने खाना भेजने को कहा और खाने के टेबुल पर बैठते ही वीणा ने आरम्भ कर दिया, "हां रेखा, तो तुम प्यार में वासना की बातें कर रही थी। मेरे ख्याल में प्यार वासना से सर्वथा पृथक है। यह दो व्यक्तियों के मध्य शारीरिक नहीं बल्कि आत्मिक तथा हार्दिक सम्बन्ध का द्योतक है। प्यार अथवा प्रेम की स्थिति में मनुष्य किसी पराये या सर्वथा अपरिचित को भी नितान्त अपना मान लेता है और अपनत्व की यह भावना हार्दिक है। यह शारीरिक हो नहीं सकती, क्योंकि, शरीर का भावना से क्या मतलब ? अब रही बात यह कि आखिर प्यार में शरीर का कोई स्थान है या नहीं ? तो मुझे इस सम्बन्ध में केवल यह कहना है कि शारीरिक मिलन की स्थिति सच्चे प्यार में तभी आती है जब हार्दिक मिलन पूर्णता को प्राप्त कर जाता है।"

"आखिर तुमने प्यार में वासना का महत्त्व माना तो ?"

"महत्त्व कैसा ? मैंने केवल इतना कहा कि सच्चे प्यार में वासना का स्थान न तो आरम्भ में है न मध्य में। सच्चे प्यार की परिणति सदा वैवाहिक सम्बन्ध में होती है और वासना का आगमन तब प्यार की पराकाष्ठा के रूप में होता है। न तो प्यार और वासना एक है और न प्यार वासना पर आधारित ही। प्यार अपने में पूर्ण है, इसे वासना के सहारे की आवश्यकता नहीं। उसी तरह वासना भी अपने में पर्याप्त है, प्यार की भूमिका इसके लिए आवश्यक नहीं। वासना तो बाजारों में बिकती है रेखा, पर प्यार···? मनुष्य के द्वारा आविष्कृत इस मुद्रा ने मनुष्य तक की भी कीमत लगा दी, पर प्यार ही एक वस्तु है जिसके समक्ष मुद्रा की क्रयशक्ति ने भी घुटने टेक दिए। प्यार कितनी महंगी चीज है रेखा, साथ ही कितनी सस्ती भी। इसके लिए कोई कीमत नहीं, पर साथ ही यह इतनी कीमती है कि दुनिया की सारी क्रयशक्ति भी इसके समक्ष व्यर्थ है···।"

"पर वीणा, तुम्हारी ही बात ठीक है तो लोग वासना को ही प्यार में

ज्यादा महत्त्व क्यों देते हैं और प्यार में जहां दो-चार कदम बढ़े नहीं कि वासना पर हीं···।" रेखा ने टोका।

"जो लोग प्यार में वासना को महत्त्व देते हैं और तुम्हारे शब्दों में प्यार में दो-चार कदम चलने के बाद ही वासना पर उतर आते हैं वे वस्तुतः प्यार नहीं करते। उनका ध्येय मात्र वासना-पूर्ति होता है। वे जाने या अनजाने वासना के पूर्व, प्यार की भूमिका मात्र अदा करते हैं। और जैसा मैंने पहले बताया वासना में प्यार की यह भूमिका व्यर्थ ही है। अधिकांश स्थितियों में यही होता है कि यह भूमिका बहुत संक्षिप्त होती है जो उद्देश्य-पूर्ति के साथ ही समाप्त भी हो जाती है। इसलिए मुझे यह कहना है कि अच्छा हो कि वासना की परिभाषा को थोड़ा विस्तृत कर झूठे प्यार की इस संक्षिप्त भूमिका को भी वासना के अन्दर ही समेट लिया जाए।"

"पर क्या तुम यह स्वीकार नहीं करोगी कि अधिकांश स्थितियों में आजकल का प्यार, तुम्हारी बताई संक्षिप्त भूमिका ही है ?"

"निस्सन्देह," वीणा ने खाने के टेबुल से उठते हुए आरम्भ किया, "पर, मुझे कहना यह है कि प्यार और प्यार की भूमिका बहुत कुछ व्यक्तियों के संस्कार, वातावरण तथा उनके पारिवारिक परिवेश पर निर्भर करती है। अच्छे संस्कार के लोग प्यार की भूमिका नहीं अदा करते, वे प्यार ही करते हैं।" यह कहकर वीणा धीरे से हंस दी।

वीणा जाने के लिए उठ खड़ी हुई और रेखा की बांह में एक चिकोटी काटते हुए बोली, "मैंने तो तुम्हारे सभी प्रश्नों के उत्तर दे दिए, पर तुमने मेरे एक ही प्रश्न का अभी तक जवाब नहीं दिया···। खैर, देखो कब तक यह राज, राज बना रहता है···।" कहकर वीणा अपनी गाड़ी में बैठ गई।

"बाई !" रेखा ने गाड़ी का फाटक बन्द करते हुए कहा।

"बाई !" वीणा ने कहा और उसकी गाड़ी बढ़ गई।

तीन

वीणा के जाते ही रेखा उद्विग्न हो उठी। प्यार और प्यार की भूमिका, इन दोनों

के मध्य वीणा ने जो अन्तर दिखाया था उससे रेखा के मन में एक भयानक अशान्ति घर कर गई। वह समझ नहीं पा रही थी कि अपने सन्दर्भ में इस अन्तर को वह कैसे स्पष्ट करे। इन दोनों के मध्य एक विभाजक रेखा खींचना उसे कठिन लग रहा था। वह सुन्दर थी, आकर्षक और गुणवती भी। उससे प्यार की भीख मांगने वालों की कमी कभी नहीं रही थी। वीणा से वह झूठ बोल गई थी कि अब तक कोई भी उसके दिल में नहीं आ सका था। पर जब उसने भीतर टटोलकर देखा तो पाया कि वास्तविकता कुछ और ही है"। उसे लग रहा था कि अब तक जिसे वह प्यार समझ रही थी वह सब मात्र प्यार की भूमिका ही तो नहीं रहे? पर, रेखा ने सोचा, 'इसमें उसका दोष ही कितना है? यह उसके रूप और गुणों का दोष है जिन्होंने कभी उसकी वास्तविक स्थिति को उसके समक्ष उभरने ही नहीं दिया। वह झूठी और हल्की प्रशंसाओं पर फिसलती गई। इन झूठी और स्वार्थी प्रशंसाओं ने उसे शोख, अल्हड़ और चंचल बना दिया और वह प्यार की भूमिकाओं में बंधती गई।'

'प्यार की भूमिका···शारीरिक समर्पण, मानसिक सम्बन्ध की शारीरिक परिणति,' वीणा की ये सारी बातें रेखा के मस्तिष्क में गूंजने लगी। 'तो—तो क्या वह मात्र भूमिका के लिए ही बनी है? उसे सच्चा प्यार नसीब नहीं?' रेखा सोच रही थी और कई एक भूली-बिसरी बातें उसके मस्तिष्क में आती जा रही थीं।

दिलीप···। हां, उसका नाम दिलीप ही था। उस समय वह देहरादून में पढ़ती थी। वहीं से उसने इन्टर किया था। प्रथम वर्ष की कक्षा में पहले-पहले आई थी। हर क्लास में लड़के और लड़कियों के बैठने का अलग-अलग प्रबन्ध था। उसके सामने की बेंच लड़कों की थी। अंग्रेजी का क्लास था। प्रोफेसर मुखर्जी ने पढ़ाने के बीच पूछ लिया था, 'व्हाट डू यू मीन बाई पोयेट्री?' सभी लड़के और लड़कियां एक-दूसरे का मुंह देखने लगे थे। पर थोड़ी ही देर में उसके सामने की बेंच के बीच से एक लड़का खड़ा हुआ और एक रटी-रटाई परिभाषा धड़ल्ले से बोल गया—'पोयेट्री इज दी स्पान्टेनियस ओवरफ्लो ऑफ पावरफुल···' वह यहीं पर रुक गया। रेखा ने देखा लड़के की आखें उसीके चेहरे पर आ गड़ी। उसे यह बहुत अच्छा लगा और वह भी उसकी तरफ तब तक देखती रही जब तक प्रो० मुखर्जी ने उसे बैठा नहीं दिया और परिभाषा की शेष पंक्तियों को स्वयं नहीं दुहरा दिया। उसके बाद की कहानी बहुत छोटी थी और वीणा

के शब्दों को सच माना जाए तो वह मात्र भूमिका ही थी…।

दो-तीन बार वे बस में साथ-साथ आए थे। फिर दिलीप ने उसे एक बार अपने घर बुलाया था। घर में उसकी मा के सिवा और कोई नहीं था। वह रेखा को अपने कमरे में ले गया था। कुछ देर तक वे वर्डस्वर्थ की पोयेट्री पर बहस करते रहे थे और फिर दिलीप ने एकाएक उठकर किवाड़ बन्द कर दिया था। रेखा इसका कोई प्रतिवाद नहीं कर सकी थी। वह समझ रही थी कि यह उनके मध्य प्यार का आरम्भ था पर उसे दूसरे ही दिन मालूम हुआ कि जिसे वह प्यार का आरम्भ समझ रही थी वह उसका अन्त था। उस दिन दिलीप के यहां से आने के बाद वह अपने में ही खोई-खोई रही थी। रात को वह उसी-के सपने देखती रही। दूसरे दिन जब क्लास में गई तो दिलीप से उसकी मुलाकात फाटक पर ही हो गई। वह उसे एक किनारे ले गई और शरमाते-शरमाते बिना किसी भूमिका के कह डाला।

"आमि तोमाय भालो बासि।" (मैं तुम्हें प्यार करती हूं।)

"ता आमि जानि।" (वह मैं जानता हूं।)

"तो तुमि आमार संगे बिए कोरबे?"(तो, तुम मेरे साथ विवाह करोगे?)

"केनो?" (क्यों?)

"तो तुमि आमाय भालो बासो ना कि?" (तो तुम मुझे प्यार नहीं करते क्या?)

"के बोलछे?" (कौन कहता है?)

"तुमि तो बोलछो जे बिए केनो कोरबे?" (तुम्ही तो कहते हो कि विवाह क्यों करूंगा?)

"ता तो सठिय, किन्तु बिए केनो कोरब? भालोबासार अर्थ बिए तो नय?" (यह तो ठीक, किन्तु विवाह क्यों करूंगा? प्यार का अर्थ विवाह तो नहीं होता?)

इस संक्षिप्त वार्तालाप के बाद दिलीप बिना कुछ बोले चला गया था। इसके बाद वह फिर उससे कभी नहीं मिला। पर, इसके बाद एक बात अवश्य हुई। रेखा के मन में प्यार (प्यार की भूमिका) की एक अतृप्त लालसा अवश्य जग गई और फिर इसके बाद वह फिसली तो फिसलती ही गई।

इसी समय रेखा के कमरे की घड़ी ने एक बजाया और रेखा ने देखा उसके मन में भीषण अशान्ति है। उसका मस्तिष्क फटा जा रहा है और उसके लिए सोना असम्भव हो गया है।

'प्यार की भूमिका पर भूमिका,' रेखा फिर सोचने लगी। 'दिलीप से सम्बन्ध के आज चार साल गुजर गए हैं। उस समय वह प्रथम वर्ष में थी, आज चतुर्थ वर्ष में है। इस चार साल की अवधि में उसे छोटी भूमिकाओं की संख्या तो याद नहीं, पर उसने चार स्पष्ट भूमिकाएं अवश्य अदा की हैं। हर भूमिका आज के पहले उसे प्यार ही लग रही थी। पर आज सब भूमिका ही निकली। ओह, वे नाम जिन्हें वह कभी होंठों पर गिनकर अघाती नहीं थी आज कितने घिनौने लग रहे थे! रेखा को लगा वह बहुत नीच है, गिरी हुई है, वह नाले के पिल्लू से भी बदतर है। वह प्यार की भूमिकाएं अदा करती रही है। उसे सच्चा प्यार अब तक नहीं मिला और अब जब उसने सच्चे प्यार का रूप समझा तो वह प्यार करने योग्य नहीं रही।' रेखा का सिर फटा जा रहा था। चिन्ता के मारे उसका बुरा हाल था। उसने टेबुल लैम्प का 'स्वीच' दबाया और एक बंगला उपन्यास लेकर उसमें मन लगाने की चेष्टा करने लगी।

चार

दूसरे दिन रेखा कॉलिज नहीं गई तो वीणा को चिन्ता हुई। वह कभी भी जान-बूझकर अनुपस्थित नहीं होती थी।

कॉलिज से छुट्टी होते ही वीणा रेखा के घर पहुंची। शाम के कोई साढ़े चार बजे थे और रेखा अब भी बिस्तर में थी। उसे देखने से स्पष्ट था कि न तो उसने स्नान ही किया था न खाना ही खाया था। बेतरतीब केश, उतरे मुख और सूखे होंठों में उसकी हुलिया अजीब लग रही थी।

"क्या बात है रेखा? तुम कॉलिज नहीं गई?"—वीणा पास बैठते हुए बोली।

"मेरी तबीयत ठीक नहीं है।"

"कल रात ग्यारह बजे तक तो तुम एकदम ठीक थी।"

"हां, उसके बाद ही मैं अस्वस्थ हो गई।"

"कोई बात नहीं, आज भी तुम्हारे 'वे' कॉलिज नहीं आए। सुना दार्जिलिंग जो

छुट्टी पर गए सो अभी तक नहीं लौटे।"

"भगवान के लिए चुप करो वीणा। मैं ऐसा कोई शब्द नहीं सुनना चाहती।" रेखा उठकर एक-ब-एक पलंग पर बैठ गई और उसने लगभग चिल्लाते हुए अपने हाथों से वीणा का मुंह ढंक दिया। वीणा के आश्चर्य का कोई ठिकाना न था। उसने रेखा को गोद में खींच लिया और ललाट पर की बिखरी लटों को ठीक करते हुए बड़े प्यार से बोली, "क्या बात है रेखा, तुम्हें हुआ क्या है?"

वह वीणा की गोद में सिर छिपाकर फफक पड़ी और थोड़ी देर के बाद सिसकियों के बीच ही बोली—

"वीणा, मैं नीच हूं। मैं गिरी हुई हूं!"

"पर कैसे?" वीणा ने धीरे-धीरे रेखा के केशों में उंगलियां फिराते हुए कहा।

"कुछ नहीं वीणा, कुछ नहीं, मैं कुछ नहीं बोल सकती। इतना ही जानती हूं कि मैं गिरी हुई हूं। मैं नर्क के कीड़े से भी बदतर हूं। मैं वेश्या हूं वीणा। मैं पापिनी हूं। मैं तुम्हारे पास बैठने योग्य भी नहीं।" उसने छिटककर वीणा से दूर होना चाहा, पर उसके पंजे से वह मुक्त नहीं हो सकी।

"मैं सब कुछ समझती हूं रेखा, सब कुछ जानती हूं। पर, इसमें दुःखित होने की क्या बात है?"

"तुम सब कुछ समझती हो वीणा? क्या कहा तुमने, तुम सब कुछ समझती हो, तुम सब कुछ जानती हो?" रेखा ने एक झटके से अपना सिर वीणा की गोद से निकाल लिया था और उसकी लाल-लाल अश्रु-पूर्ण आंखें, दो बड़े प्रश्न चिह्न बनकर वीणा के चेहरे पर टिक गई थीं।

"हां रेखा, तुम्हारे साथ रहते हुए मुझे दो वर्ष हो गए। इस बीच तुम्हारे बारे में बहुत कुछ समझ लेना, बहुत कुछ जान लेना मेरे लिए कठिन नहीं था। फिर भी, कुछ कारणवश मैंने तुमसे कुछ नहीं कहा और कारण यही था कि मुझे पूरी उम्मीद थी कि तुम रास्ते पर आ जाओगी, क्योंकि प्रो० विशाल का तुम्हारे प्रति आकृष्ट होना और तुम्हारा भी उनके प्रति कुछ खिंचा-खिंचा-सा रहना—इससे मेरे मन को विश्वास हो गया था कि तुम सही रास्ते पर आ रही हो। इसी कारण मैं बार-बार प्रो० विशाल का नाम लेकर तुम्हें छेड़ती आई हूं। पर, जब भी मैंने इस सम्बन्ध में कुछ जानना चाहा तुमने 'आमि किछु जानि ना' कहकर मुझसे पिंड छुड़ाने की चेष्टा की। अब कल ही की बात लो। कल,

अभिनय के समय तुम्हारी आंखें बार-बार किसीको खोज रही थी। मैंने समझा तुम अवश्य ही प्रो० विशाल को खोज रही हो। इसी कारण मैंने अभिनय के अन्त में तुम्हे पकड़ा था। पर तुम फिर वही घिसी-पिटी 'आमि किछु जानि ना' ले बैठी।"

"मैंने तो ठीक ही कहा था वीणा।"

"तो क्या तुम प्रो० विशाल से प्यार नहीं करती ?" वीणा ने आश्चर्य से कहा।

"यह मैं बाद में बतलाऊंगी वीणा। पहले तुम यह बताओ कि इतना सब समझने के बाद भी तुम मुझे किसीके प्यार के योग्य समझती हो ?" रेखा की सिसकियां थम गई थी। आंखें अब भी गीली थीं।

"हां रेखा अब भी समझती हूं और हमेशा समझूंगी। तुम में रूप है, गुण है, तुम एक सम्भ्रान्त पिता की इकलौती लड़की हो। तुममें क्या कमी है जो तुम किसीके प्यार के योग्य नही…?"

"पर मेरा चरित्र ? मेरा कैरेक्टर ? वीणा, तुमने शायद मुझे ठीक से नहीं समझा ?" रेखा फिर लगभग चिल्ला पड़ी।

"मैं तुम्हें बहुत ठीक से समझती हूं रेखा। इतना जितना शायद तुम स्वयं को भी नही समझती।" वीणा ने धीरे से कहा।

"मैं कहती हूं वीणा, मैं गिरी हुई हूं, इतनी गिरी जितनी की तुम कल्पना भी नही कर सकती। मैंने तुम्हारे शब्दों में प्यार की भूमिकाएं अदा की हैं। मैंने…मैं…ने वीणा। मैंने क्षणिक मानसिक सम्बन्धों को तुम्हारे शब्दों में शारीरिक, हा…हा, शारीरिक परिणति दी है, एक बार नही दो बार नहीं…।"

"हां-हां, चार-चार बार।" वीणा बीच में बोल उठी।

"वीणा!!"

"रेखा।" वीणा गम्भीर हो गई, "यह तो मैं थोड़ी देर पहले ही कह चुकी हूं कि मैं सब कुछ जानती हूं। पर उस समय शायद तुमने ठीक से नहीं समझा। मुझे सब कुछ शरद के द्वारा मालूम हो गया है।"

"शरद!! उसने तुमसे सब कुछ कह दिया है! मेरा पूरा इतिहास!! हे भगवान!!" और लगा रेखा पागल हो जाएगी।

वीणा ने रेखा का दाहिना हाथ अपने हाथ में लिया और सात्वनापूर्ण शब्दों में बोली, "घबराने की बात नहीं रेखा, पर मुझे अब दूसरा ही भय है। जहां तक मुझे पता है तुम अभी शरद के साथ बहुत आगे नहीं बढ़ी हो। पर, ध्यान

रखो, तुम एक बार फिर प्यार की भूमिका को ही प्यार समझने की गलती कर रही हो। रेखा, तुम पांचवीं बार गिरने जा रही हो और इसका सबसे बड़ा प्रमाण यही है कि जिसको अपना समझ तुमने अपना पूरा इतिहास उसके समक्ष रख दिया, जिसके सामने अपने सारे पापों को खोल तुमने प्रायश्चित करना चाहा, उसीने मुझे सब कुछ बता दिया।"

"झूठ! एकदम झूठ!! यह हो ही नहीं सकता वीणा! शरद, मुझसे प्यार करता है। अवश्य ही तुम कोई कहानी गढ़ रही हो। मुझे तुम शरद से अलग करना चाहती हो।"

"तुम इस समय भावनाओं की बाढ़ में बह रही हो और मैं तुम्हें बहुत उत्तेजित करना नहीं चाहती। पर विश्वास दिलाने के लिए इतना ही कहती हूं कि तुम्हें याद होगा तुमने एक दिन प्रो० विशाल के क्लास में शरद के 'रोल नम्बर' पर ही अटेंडेंस बोल दिया था। यह इस बात का पर्याप्त प्रमाण था कि तुम उस समय शरद के बारे में ही सोच रही थी। मुझे उसी समय संदेह हुआ था और इसके बाद की छोटी-छोटी घटनाओं से मेरी शंका जब पुष्ट होती गई तो मैंने एक दिन शरद से सीधे तुम्हारे बारे में पूछ लिया। वह अक्सर मेरे घर आता है और हम लोगों में भाई-बहन के नाते खूब घुलमिलकर बातें होती हैं। उस दिन मुझे जितना इस बात का आश्चर्य नहीं हुआ कि तुम शरद के साथ बहुत आगे बढ़ गई हो उतना इससे हुआ कि तुम्हारे साथ प्यार का ढोंग रचने के बाद भी उसने तुम्हारी सारी बातें मुझे आदि से अन्त तक बता दीं।"

रेखा अब तक सब कुछ सुन रही थी। बात समाप्त होते ही जाने या अन-जाने में उसके मुंह से निकला, "यह झूठ है। शरद मुझे प्यार करता है।" रेखा को लगा जैसे उसके सामने की सभी चीजें तीव्र गति से घूम रही हैं। दीवार, दीवार के चित्र, पलंग, वीणा, सभी जैसे पृथ्वी की गति से घूम रहे हैं। दूसरे ही क्षण मूर्छित हो वह वीणा की गोद में गिर गई।

वीणा को जैसे ज्ञात था कि यह स्थिति आएगी। बिना किसी घबराहट के दौड़ी-दौड़ी वह रेखा की मां के पास गई। उसे रेखा की मूर्छा की बात बताई और फिर उसी कमरे में रखे टेलीफोन से उनके फैमली डॉक्टर को फोन कर दिया। डॉक्टर के आने में कोई दस मिनट लगे। तब तक रेखा की मां के साथ मिलकर वह रेखा को होश में लाने का प्रयत्न करती रही। डॉक्टर के आने के बाद जब उसके उपचारों से रेखा शीघ्र ही होश में आ गई तो वीणा

बिना किसीसे कुछ बोले धीरे से खिसक गई।

होश में आते ही रेखा चिल्ला पड़ी, "मुझे मरने दो। मैं जिन्दा नहीं रहना चाहती। सभी मेरे पास से चले जाओ। मैं किसीकी शक्ल नहीं देखना चाहती।" डॉक्टर ने आसानी से समझ लिया कि उसे क्या करना चाहिए। उसने सिरिंज में एक दवा भरी और रेखा के लाख प्रतिवाद के बाद भी उसके बाएं बाजू में एक इन्जेक्शन दे दिया। इन्जेक्शन से रेखा सुस्त पड़ने लगी और दो मिनटों के अन्दर ही वह जैसे गहन निद्रा में सो गई। डॉक्टर ने उसकी मां से कहा, "चिन्ता की कोई बात नहीं। अब सुबह तक ये शान्ति से सोएंगी। सवेरे उठने पर स्वयं ही सब कुछ ठीक हो जाना चाहिए।"

पांच

दूसरे दिन सवेरे उठते ही रेखा ने देखा वह पहले से ज्यादा प्रफुल्लित है। उसके सिर में दर्द भी नहीं था और जी हल्का-हल्का लग रहा था। स्नान करने के पश्चात सिर के केशों को पोंछ-झाड़कर उसने उन्हें खुला छोड़ दिया। एक हल्की गुलाबी साड़ी पहनकर, नाश्ता के बाद वह ड्राइंगरूम में आ बैठी और रेडियो ऑन कर लेटे-लेटे एक फिल्म-मैग्ज़ीन के पन्ने उलटने लगी। रेडियो में कोई हिन्दी गीत चल रहा था—

"गुजरिया जल्दी कर सिंगार
नगरिया दूर नहीं"

न जाने क्यों यह गीत उसे बहुत प्रिय था और जब कभी यह रेडियो पर आता वह जैसे झूम उठती। इसी समय दरवाजे की कॉलबेल बज उठी।

उठकर दरवाजे पर आई। किवाड़ खोला तो सामने शरद खड़ा था। वह कुछ देर तक चित्र-खचित-सी दरवाजे के बीच खड़ी रही। उसका चेहरा भाव-शून्य था और उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि वह क्या करे, क्या न करे। तभी उसके दाएं कन्धे पर हाथ रख शरद बोल पड़ा, "कैसी हो?"

उसने एक झटके में शरद के हाथ को अपने कंधे से अलग किया और

दरवाजा छोड़कर खड़ी हो गई। शरद अन्दर आया और रेखा के पास पड़ी आरामकुर्सी पर बैठ गया। रेखा आकर एक कुर्सी पर बैठ गई और हाथ में पड़ी मैगज़ीन के पन्ने अन्यमनस्क-सी उलटने लगी।

शरद ने एक सिगरेट सुलगाई और हवा में बादल बनाते हुए बोला—

"रेखा डियर।"

"..........."

"रेखा!!"

"बोलो।"

"मैं एक बात पूछना चाहता हूं!"

"शौक से पूछो।"

"प्रो० विशाल दार्जिलिंग जाने के पूर्व यहां आए थे क्या?"

"हां, आए थे!"

"तुम्हें उन्होंने कुछ पुस्तकें भी दी थीं?"

"हां, तो फिर?"

"तुमने वे पुस्तकें स्वीकार कर लीं?"

"हां, पर तुम्हें इससे मतलब?"

"मैं पूछता हूं रेखा, तुमने आखिर वे पुस्तकें स्वीकार कीं तो, क्यों?"

"मैं पूछती हूं मिस्टर शरद, आपको क्या अधिकार है कि आप ऐसे प्रश्न पूछें?" रेखा अब तक हाथ की मैगज़ीन रख चुकी थी और उसकी आंखें सीधे शरद के चेहरे पर गड़ी थीं।

शरद सिगरेट का एक पूरा कश खींचते हुए लगभग चिल्लाकर बोला—"रेखा, तुम प्रो० विशाल से प्यार करती हो।"

"करती हूं तो अपनी बला से। इसमें आपकी राय तो मैं नहीं चाहती?"

"रेखा!!!" शरद उत्तेजित हो आया था। सिगरेट के आधे जले टुकड़े को उसने खिड़की से बाहर फेंक दिया और कुर्सी पर सीधा बैठ गया।

"रेखा!!!" शरद दूसरी बार चिल्लाया।

"पर, इसमें चिल्लाने की क्या बात है? जो कुछ कहना हो शान्ति से कहिए।"

"मैं कहता हूं रेखा, तुमको किसी दूसरे से प्यार करने का कोई अधिकार नहीं।"

"क्यों?"

"इसलिए कि तुम मुझसे कह चुकी हो कि तुम मुझे प्यार करती हो और

एक व्यक्ति एक समय किसी एक ही व्यक्ति से प्यार कर सकता है।"

"ठीक है, पर मैं यह कहूं कि मैं इस समय केवल एक ही व्यक्ति से प्यार करती हूं और वह कम से कम आप नहीं हैं तब ?"

"तब यह कि तुम प्रो० विशाल से प्यार करती हो।"

"हां, तब ?"

"तब यह कि तुम गिरी हुई हो, तुम नीच हो, पाखंडिनी हो, तुम एक साथ अनेक को धोखा दे रही हो।" शरद आपे से बाहर हो रहा था।

"यह तो आपको उसी दिन मालूम हो गया था जिस दिन मैंने अपना पूरा इतिहास आपके समक्ष रख दिया था। मैं आपकी तरह गालियां तो नहीं बक सकती, पर मैं इतना अवश्य कहूंगी कि यदि मैं नीच और गिरी हुई हूं तो आप मुझसे भी ज्यादा पतित है।" रेखा संयत स्वर में बोल रही थी।

"रेखा! तुम अपने घर मे मेरा अपमान कर रही हो। तुम्हें मुझे पतित कहने का कोई अधिकार नहीं।" शरद गुस्से में था।

"अवश्य ही मुझे आपको पतित कहने का कोई अधिकार नहीं, पर आपको भी मुझपर प्यार जताने का कोई अधिकार नहीं। आज से मैं 'रेखा डियर' नहीं—'रेखा जी,' हूं।" रेखा का चेहरा दृढ़ था।

"रेखा।" शरद जैसे पहाड़ से गिरा।

"........."

"रेखा, तुमने यह क्या कह डाला ? मैं मर जाऊंगा। मैं तुम्हारे बिना जिन्दा नहीं रह सकता। रेखा! लौटा लो अपनी बात। लौटा लो रेखा।" शरद गिड़गिड़ा रहा था।

"बात लौटाने की नहीं शरद, बात बस इतनी है कि मैं अब किसीसे प्यार-व्यार नहीं करती। मुझे दुनिया में किसी पुरुष पर विश्वास नहीं रहा।"

"रेखा, पर अभी कितने रोज हुए जब तुमने मुझे अपना पूर्ण विश्वास दिया था ? तुम्हारा विश्वास इतना शीघ्र, इस तरह अविश्वास मे कैसे बदल गया ?"

"अगर आप सुनना ही चाहते हैं तो सुनिए। वह इसलिए कि दुनिया के और लोगों की तरह आपने भी विश्वासघात किया।" रेखा ने नपे-तुले शब्दों मे कहा।

"असम्भव! रेखा, तुम मुझसे ऐसी आशा नहीं कर सकती। मैं अविश्वास का पात्र नहीं।"

"क्या आपने मेरी बातें किसीसे नहीं कहीं ?"

"नहीं।"

"सोचकर बोलिए।"

"नहीं, और सौ बार नही।"

"शरद।"

"रेखा!"

"तुम झूठे हो, विश्वासघाती, मक्कार और गिरे हुए हो। तुम्हारी शक्ल बतलाती है, तुम्हारे लक्षण बोलते हैं कि तुमने अब तक मेरे समान अनेक लड़कियों को छला है, उन्हें सब्ज-बाग दिखलाकर उनका सत्यानाश किया है। शरद! मैं तो अनजाने में, परिस्थितियों के वश होकर गिरी हूं। फिर भी, मुझे अपने गिरने का पश्चात्ताप है; पर तुम्हें अपनी गिरावट पर, अपने पतन पर भी नाज है। तुम अकड़कर अपने पतन की प्रतिरक्षा कर सकते हो! ओह! तुम स्वयं तो गिरे हुए हो ही, तुमने न जाने मेरे समान कितनों को गिराया भी है।"

"रेखा।" शरद मुंह फाड़कर रेखा के चेहरे की ओर एकटक देखे जा रहा था।

"हां मिस्टर शरद, मुझे वीणा से सब कुछ ज्ञात हो गया है।"

"वीणा?" शरद का मुंह खुला का खुला ही रह गया।

"हां, घबराओ नही, उसने तुम्हारे पुराने पापों का पर्दाफाश नही किया है, यद्यपि वे इतने स्पष्ट हैं कि कॉलिज की प्रायः सभी लड़कियों की जुबान पर हैं। मैं ही एक ऐसी मूर्खा थी जिसने सुने हुए को भी अनसुना कर दिया।"

"वीणा ने आखिर तुमसे क्या कहा?" शरद भीगी बिल्ली बन आया था।

"यही कि मैं गिरी हुई हूं। मैंने अब तक अनेक पाप किए हैं। और यही कि ये सब बातें उसे शरद के द्वारा मालूम हुई।" रेखा धाराप्रवाह बोल गई।

"रेखा, मैंने गलती की है।" शरद गिड़गिड़ा रहा था।

"मैं जानती हूं शरद, कि तुम्हारे समान लोग गलती स्वीकार भी बहुत शीघ्र करते हैं। आखिर तुम्हारा अस्त्र भी तो यही है।"

"रेखा।"

"शरद, मैं जानती हूं कि तुम मेरे प्यार के पात्र नहीं हो। तुम किसीके प्यार के भी पात्र नही, फिर भी जब मुझे तुमसे प्यार हो ही गया तो तुमको प्यार नही करना भी अब मेरे वश की बात नही। काश! हमारा परिचय ही नहीं हुआ होता। काश, मैं मात्र तुम्हारे बाहरी आकर्षणों पर नही फिसली होती!

काश, तुम्हारे सारे अवगुण मुझे गुण ही नहीं लगे होते ! ओह ! तुम नहीं जानते शरद, प्यार करने वाला कितना मजबूर…।"

"रेखा, तुम नहीं जानती मैं तुम्हें कितना प्यार करता हूं !" शरद के चेहरे पर चमक आ गई थी।

"यह झूठ है और अब मैं ऐसी बातें सुनकर अपने दिल को झूठी सान्त्वना देना भी व्यर्थ समझती हूं। यह मैं खूब जानती हूं कि तुम मुझे प्यार नहीं करते या सच पूछो तो तुम प्यार कर भी नहीं सकते। तुम केवल मुझे धोखा देते हो और साथ-साथ अपने को भी।" रेखा दृढ थी। उसका चेहरा अब भी भाव-विहीन था।

"पर रेखा, मैं सच कहता हूं। मैं कसम खाकर कहता हूं कि मैं केवल तुम्हें और तुम्हें प्यार करता हूं। मेरा भूत चाहे जितना घिनौना रहा हो, पर वर्तमान पूर्णतया तुम्हारा है। तुम मुझे ठुकरा दोगी तो मैं कहीं का न रहूंगा।"

"कसम खाने की आवश्यकता नहीं। मैं मान लेती हूं कि तुम अपने रूप में मुझे प्यार भी करते हो, पर जिसे तुम प्यार समझने की भूल करते हो वह वस्तुतः प्यार नहीं, कुछ और है।"

"तो वह क्या है ?" शरद आश्चर्य से रेखा की तरफ देख रहा था।

"वह चाहे जो हो, पर प्यार नहीं है।"

"रेखा, मुझे संशय में नहीं रखो। तुम मेरी स्थिति को समझती हो। मैं तुम्हारे बिना रह नहीं सकता। मैं तुमसे शादी करना चाहता हूं।" शरद एक सांस में बोल गया।

रेखा शरद की बात सुनकर धीरे से मुस्कराई, पर बोली कुछ नहीं।

"रेखा ! !" शरद रेखा का हाथ पकड़कर झकझोरते हुए बोला।

रेखा अपना हाथ छुडाते हुए बोली, "शरद, इतना याद रखो कि रेखा, वह रेखा नहीं, जिसे तुम अब तक जानते आए हो। मुझे तुम्हारे प्रति सहानुभूति अवश्य है, पर मैं तुम्हें उसका नाजायज फायदा नहीं उठाने दूंगी। मुझे इसकी खुशी है कि मैं पांचवीं बार नहीं गिरी और भगवान ने चाहा तो अब गिरूंगी भी नहीं। पर, तुम इतना ध्यान रखो कि जाने या अनजाने अब तुम मेरे शरीर का कोई भाग नहीं छूने जा रहे। रही बात तुमसे शादी की तो मैं तुमसे कुछ प्रश्न करना चाहती हूं। क्या तुम उसका सही-सही उत्तर दे सकोगे ?" रेखा का स्वर दृढ़ हो आया था।

"एकदम, सही-सही।" शरद का उतावलापन उसके चेहरे पर स्पष्ट था।

"कसम खाओ।"

"खाता हूं।"

"तुमने इसके पहले कितनी लड़कियों से प्यार किया है?"

"ठीक याद नहीं।"

"हूं।" रेखा ने एक दीर्घ सांस खींची, उसका चेहरा कुछ उतर आया था।

"रेखा!!"

"कोई बात नहीं," रेखा अपने को नियंत्रित कर चुकी थी, "यह तो बताओ, तुमने यह प्रस्ताव अब तक कितनी लड़कियों के समक्ष रखा है?"

"कौन-सा प्रस्ताव?"

"यही शादी का।"

"कोई सात के पास।"

"तो फिर उनसे शादी क्यों नहीं हुई?"

"क्योंकि...क्योंकि..."

"क्योंकि क्या?"

"..." लगा शरद के मुह में आवाज ही नहीं थी।

"मैं समझ गई, क्योंकि तुम्हारे शादी के प्रस्ताव के सब्जबाग में आकर उन्होंने अपना सब कुछ तुमपर लुटा दिया और फिर तुमने उन्हें दूध की मक्खी की तरह अपने जीवन से निकाल फेंका।"

"रेखा।" लगा शरद किसी भारी बोझ के नीचे दबा जा रहा था।

"और हां, तुम इतना ध्यान रखो कि एक समय था जब मैं इस प्रस्ताव पर फिसल भी जाती, पर मैंने तुम्हें बता दिया मैं अब वह रेखा नहीं हूं।"

"पर, तुम थोड़ी देर पहले ही कह चुकी हो कि तुम मुझे प्यार करती हो।"

"वह, तो मैं कह ही चुकी हूं, मेरी मजबूरी है। पर मैं स्वयं नहीं जानती इस प्यार में कितनी गहराई है।"

"और प्रो० विशाल से?"

"यह तो तुम जानते ही हो कि व्यक्ति एक बार किसी एक से ही प्यार कर सकता है।"

"रेखा! तुम कितनी अच्छी हो।" शरद का चेहरा बहुत देर के बाद चमका था।

"मैं नहीं जानती कि भविष्य के गर्भ में क्या है। मैं न अपने को समझ पाती हूं न दूसरों को। अब तुम जा सकते हो।" इतना कहकर रेखा उठी और

अन्दर के दरवाज़े से दूसरे कमरे में चली गई।

छह

शरद के जाने के थोड़ी देर बाद ही रेखा के ड्राइंगरूम की बेल फिर बज पड़ी। रेखा ने दरवाजा खोला। वीणा खड़ी थी।

"कैसी हो रेखा ?" वीणा ने उसे देखते ही पूछा।

"एकदम अच्छी।" रेखा ने जवाब दिया और वीणा को खींचकर अन्दर ले गई।

"कल तो तुम्हारी हालत बहुत खराब थी ?"

"कल की बात छोड़ो, आज मैं दूसरी ही रेखा हूं। एकदम परिवर्तित। अब यह प्यार की भूमिकाएं अदा करने वाली रेखा नहीं है।"

वीणा ने यह सुनते ही रेखा को भुजाओं में बांध लिया और बोल पड़ी—"वाह रेखा ! तब तो तुम अब एकदम विशाल के योग्य बन गईं।"

रेखा अपने को वीणा के बन्धन से मुक्त करती हुई एक कुर्सी पर बैठ गई। वीणा उसके सामने की कुर्सी पर बैठती हुई बोली—"वीणा ! तुम विशाल का नाम इस तरह क्यों बार-बार लेती हो ?"

"क्योंकि वह तुमसे प्यार करते हैं और तुम ठीक उन्हीके योग्य हो। तुम्हारे समान लड़की के लिए विशाल के समान व्यक्ति तो मिलना ही चाहिए।"

"वीणा !"

"बोलो।"

"काश, मैं विशाल को प्यार कर पाती !" रेखा का गला भर आया था।

"पर, क्यों ?"

"मैं मजबूर हूं।"

"मैं समझ गई। तुमपर शरद के प्यार का भूत सवार है। पर यही बात थी तो तुमने विशाल को क्यों आगे बढ़ाया ? यह तो तुम मानोगी ही कि तुम्हीं ने उन्हें यहां तक खींचा है। जिस दिन से उन्होंने पहले-पहल तुम्हारा क्लास लिया तुम उसी दिन से बहाने बनाकर उनके डिपार्टमेंट में दौड़ने लगीं। उनका अपने

पिताजी से परिचय कराया, उन्हें अपने घर बुलाया और अब यह क्या बात है जो तुम इस तरह उनसे खिंची-खिंची रह रही हो ?"

"यह सब ठीक है वीणा और उस समय मैं शायद विशाल से प्यार भी करती थी पर इसी बीच शरद मेरे और उनके बीच आ गया। लगातार उसने अपने प्यार की दुहाइयां देनी आरम्भ की और मैं धीरे-धीरे उसकी बातों में आती गई। फिर बात यहां तक पहुंची कि शरद को खुश करने के लिए मैंने विशाल से मिलना और उनकी तरफ देखना भी छोड़ दिया। और तो और मैंने शरद के कहने पर ही विशाल के क्लासों से भी कन्नी काटी और उनके क्लासों के काफी महत्वपूर्ण होने के बाद भी मैं उन्हें छोड़ने को बाध्य हुई।"

"और तुम्हें यह भी मालूम है कि तुम्हारे उन व्यवहारों का विशाल पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा और उनका स्वास्थ्य दिनोंदिन गिरने लगा था ?"

"हां।"

"तो तुम्हें यह भी अन्दाज़ होगा कि तुम्हारी चिन्ता से अपना पिंड छुडाने के लिए ही पिछली छुट्टियों में वे दार्जिलिंग चले गए और अभी तक नहीं लौटे।"

"हां।"

"तब तुम कितनी निष्ठुर हो रेखा ?"

"निष्ठुर नहीं, वीणा। मैं मजबूर हूं। मुझे विशाल से पूरी सहानुभूति है। मैं कभी उनसे प्यार भी करती थी और मेरा यह सौभाग्य होता कि मैं उनके चरणों में स्थान प्राप्त करती, पर मुझपर शरद का जादू चल गया है और मैं उससे अपना पिंड नहीं छुड़ा पा रही।"

"पर, एक बात बताओ, दार्जिलिंग जाने के पहले विशाल यहां आए थे ?"

"हां।"

"कब ?"

"जाने की सुबह। कोई सात बजे।"

"उन्होंने क्या कहा ?"

"तुम तो जानती ही हो आज तक उनसे मेरी कोई विशेष बातें नहीं हुई हैं। फिर भी मुझे यह स्वीकार करने में कोई संकोच नहीं कि विशाल जितना मुझसे प्यार करते हैं उतना शायद ही कोई व्यक्ति किसी दूसरे से कर सकता है। उन्होंने आते ही पूछा था, "पिताजी कहां हैं ?' मैंने कहा, 'कार्यालय गए हैं।' उन्होंने फिर कहा, 'उनसे कह देना मैं दार्जिलिंग जा रहा हूं। शायद दो महीने बाद आ पाऊं।"

"और किताबें ?"

"हां उनके हाथ में किताबों का एक पैकेट था। उसे उन्होंने मेरी तरफ बढाकर कहा, 'ये तुम्हारे काम की हैं, मेरे पास बेकार पड़ी थीं, सोचा तुम्हारे काम आ जाएंगी।'"

"तो तुमने उन्हें लिया क्यों ?"

"क्योंकि मैं उनका मन नहीं तोड़ना चाहती थी और दूसरी बात कि मुझे उनकी आवश्यकता भी थी।"

"रेखा !"

"बोलो।"

"मैं कहती हूं तुम विशाल को बचा लो। माना तुम उन्हें प्यार नहीं करती पर हो सकता है प्रयत्न करने से धीरे-धीरे तुम उन्हें चाहने भी लगो। दूसरी बात यह कि तुम झूठी सहानुभूति और खिंचाव भी उनकी तरफ दिखाओगी तो उनका मन भरा रहेगा और वे इसे तुम्हारा प्यार ही समझेंगे। रेखा, तुम विशाल की बरबादी का कारण न बनो।"

"मैं मजबूर हूं बीणा ! मैं अपने रूप में ही सही, शरद को प्यार करने लगी हूं। मैं उसकी सभी बुराइयों से परिचित हूं। मैंने आज उसे खुले शब्दों में दुत्कारा भी है, फिर भी मैं उसकी नाराजगी मोल लेने की हिम्मत नहीं कर सकती।"

रेखा की बातें सुनकर बीणा कुछ देर चुप रहकर बोली—

"रेखा, मुझे लगता है तुममें सुधार अब भी नहीं हुआ। तुमने अपने को मिथ्या सांत्वना दे रखी है कि तुम बदल गई हो। अब भी तुम वहीं हो जहां तुम पहले थीं। अगर तुम्हारी बातों को सत्य भी मान लूं तो तुम ध्यान से सुन लो कि तुम एक बार फिर गिरने जा रही हो और अबकी बार का यह पतन तुम्हें कहीं का न छोड़ेगा।"

"यह तो नहीं होगा तुम निश्चिन्त रहो।" रेखा ने दृढ़ता से कहा।

"खैर। यह तो भविष्य ही बतलाएगा। अच्छा, मैं चली।"

"क्यों, रुकोगी नहीं ?"

"नहीं।"

बीणा के जाने के बाद रेखा ने दरवाजा बन्द कर लिया। घड़ी पर दृष्टि डाली तो ग्यारह बज रहे थे। उसी समय मां ने चौके से आवाज दी—

"रेखा !"

"केनो ?" (क्यों ?)

"ए, दिक् एसो।" (यहां आओ)

"आदिच मां।" (आ रही हूं मां)

भीतर गई तो देखा, मां के हाथ में एक लिफाफा है। लिफाफा बढ़ाते हुए मां ने कहा—

"तोमार चिट्ठी। कालि के एसेलो। आमि तोमा के दिते पारलाम ना।" (तुम्हारी चिट्ठी है। कल ही आई थी। मैं तुम्हें दे नहीं पाई।)

"कोथाय थेके आश्चे मां ?" (कहां से आ रही है मां ?)"

"बूझते पारि ना। डाकखानार मुहर टा स्पष्ट नेई। किन्तु तुमि खावार कोरो, तारपोरे पोढ़ो।" (समझ नहीं पा रही हूं। डाकखाना की मुहर भी स्पष्ट नहीं है, पर तुम खाना खा लो, इसके बाद पढ़ना।)

रेखा की मां खाने के टेबुल पर खाना लगा चुकी थी। रेखा खाने बैठी तो उसके दिमाग में अब भी वीणा की ये बातें गूंज रही थीं—'रेखा, तुम विशाल को बचा लो, तुम उनकी बरबादी का कारण न बनो।' रेखा सोच रही थी, उसमें ऐसा क्या कुछ है जो विशाल उसपर न्योछावर है। कॉलिज में पचासों लड़कियां तो हैं, एक से एक खूबसूरत। हर लड़की उनकी एक दृष्टि के लिए तड़पती है। वे क्यों नहीं किसी और को चुन लेते। वह तो किसी प्रकार उनके योग्य नहीं है। पर, जो हो, विशाल उसे प्यार कितना करते हैं। काश, वह उनके प्यार का उपभोग कर पाती। कभी यह कह पाती कि वह उनकी है, केवल उनकी। और यह सोचते ही उसके शरीर में एक विचित्र सिहरन-सी दौड़ गई। विशाल के होने की भावना के न जाने किस अपूर्व आनन्द ने उसे एक क्षण के लिए अभिभूत कर दिया।

"तुमि कि भावछो ?" (तुम क्या सोच रही हो रेखा ?) चौंके से मां की आवाज आई।

"किछु तो नेई मा।" (कुछ तो नहीं मा) रेखा ने अपनी तन्द्रा के बीच से ही उत्तर दिया।

"किछु ना केनो ? तोमार खावार तो होच्छे ना ?" (कुछ नहीं क्यों ? तुम खा तो नहीं रही हो ?)

और रेखा ने देखा सचमुच वह तो सोचने में खाना ही भूल गई थी। रोटी का एक टुकड़ा उसने मुंह में डाल रखा था पर मुंह का टुकड़ा मुंह में और हाथ

जा हाथ में पड़ा था।

"कार चिट्ठी ?" (किसकी चिट्ठी है ?) मां ने शायद चुटकी ली।

"कि कोरे जानवो, एतो खन खुलि नेई !" (कैसे जानूंगी। अभी तो खोली तक नहीं।) रेखा ने कहा और फिर तेज़ी से खाने लगी।

खाना खाने के बाद अपने कमरे में आई। पलंग पर नई धुली चादर बिछी थी। आज रविवार था, कॉलेज जाना नहीं था। इत्मीनान से पलंग पर लेटकर उसने लिफाफा खोला। एक छोटा-सा कागज़ का टुकड़ा अंदर मुड़ा पड़ा था। अंग्रेज़ी में लिखी एक छोटी चिट्ठी थी—

कानपुर

प्रिय रेखा,

कोई दो साल पूर्व से ही हमारा सम्बन्ध चला आ रहा है, पर अब तक हम संशय और अविश्वास की स्थिति में ही पलते रहे हैं। अगर तुम चाहती हो कि हमारा सम्बन्ध स्थिर रहे, और संशय और अविश्वास की यह दु:स्थिति समाप्त हो तो मुझे कुछ लिखो। मेरा पता तुम्हें कॉलेज से मिल जायगा।

तुम्हारी—
रेणु

'रेणु ! कानपुर ! !' रेखा सोचने लगी। इधर तो वह तीन साल से कानपुर गई नहीं। रेणु नाम की किसी लड़की को तो वह जानती भी नहीं। फिर यह चिट्ठी इतनी छोटी क्यों ? कुछ तो लिखती, कहां भेंट हुई, क्या बातें हुईं ? हे राम, ऐसे लोग भी होते हैं। लिख दिया, कॉलेज में पता मिल जाएगा। अरे कॉलेज का कुछ पता भी हो। किस क्लास मे पढ़ती है ? किस कॉलेज में पढ़ती है ? लाट साहिबा बनी है। कम से कम नीचे पता तो लिख देती। और रेखा ने झल्लाकर चिट्ठी को वापस लिफाफे मे डाल दिया। लिफाफे को वह तकिये के नीचे रखने ही जा रही थी कि उसकी दृष्टि लिफाफे के पीछे, कलम से लगाए एक चिह्न पर पड़ी।

"माई गॉड !" वह जैसे प्रसन्नता से चीख पड़ी। यह तो वही चिह्न है जिसे विशाल ने उसके और अपने नाम के पहले अक्षरों को मिलाकर बनाया था और जो उनके द्वारा दी प्राय: हर पुस्तक पर बना था। वह पलंग से उठी, दौड़कर आलमारी से विशाल की दी हुई एक पुस्तक उठा लाई।

पुस्तक के दूसरे ही पृष्ठ पर ठीक वैसा ही चिह्न बना हुआ था। 'तो यह

चिट्ठी विशाल की भेजी हुई है ! पर विशाल ने इस रूप में इसे क्यों भेजा ? कहां दार्जिलिंग और कहां कानपुर ? और फिर पत्र के नीचे रेणु का नाम। यह बात तो विशाल के सम्मान को शोभा नहीं देती। तभी मा कमरे में आ गई। लिफाफा अब भी रेखा के हाथों में था। आते ही वह बोल पड़ी—

"कार चिट्ठी रे ? (किसकी चिट्ठी है रे ?) रेखा एक क्षण के लिए हतप्रभ हो गई। फिर थोड़ी ही देर में अपने को संयत कर लिया—

"रेणुर !" (रेणु की)

"रेणु के ?" (रेणु कौन ?)

"आमार एकटी बन्धु !" (मेरी एक दोस्त)

"ओ !" और मां चली गई।

रेखा की समझ में अब आ गया कि विशाल को इस तरह क्यों चिट्ठी लिखनी पड़ी। उसने सोचा उसे बदनामी से बचाने के लिए ही विशाल को इस हद तक उतरना पड़ा।

वह सोच रही थी, 'आखिर शरद में ऐसा क्या कुछ है जो उसे विशाल का नहीं बनने देता। माना शरद विशाल से दो-चार वर्ष छोटा है और उसका सहपाठी भी है। पर, इससे क्या होता है ? विशाल भी तो उससे केवल दो-चार साल बड़े हैं। माना शरद एक अच्छा गायक है और एक स्पोर्ट्समैन भी। पर इसके अलावा विशाल से उसकी कोई तुलना है ? आसमान, जमीन का अन्तर है कि नहीं ? लड़कियों को न जाने क्या होता है ? कभी, किसीके चेहरे पर फिसलती हैं, तो कभी किसीके पर्स पर। कभी बांसुरी पर खिंची किसीकी एक तान पर तो कभी किसी और हल्की करामात पर। काश, हम लड़कियां, पुरुषों के इन हल्के आकर्षणों पर न जाकर उनके गुणों की पूजा करना आरम्भ करतीं ! पर हममें शायद भगवान ने अक्ल की मात्रा ही कुछ कम दी है। वह जो किसी अंग्रेजी उपन्यास में पढ़ा था न, एक लड़की ही तो कह रही है—"ऐज इफ एनी गर्ल हैव एवर लव्ड फोर वर्थ्ज...।" (जैसे किसी लड़की ने आज तक किसीके गुणों के चलते प्यार किया हो...।) भला लड़कियों का मूल्यांकन लड़कियों से अच्छा दूसरा कौन कर सकता है ! पर वीणा,' रेखा ने आगे सोचा, 'वह तो लगता है हम लड़कियों से सर्वथा भिन्न है। कितनी गम्भीर है और कैसी बड़ी-बड़ी बातें करती है ? आज तक किसीने किसी लड़के की तरफ उसे आखें उठाते भी नहीं देखा। फिर पढ़ने में भी वह उतनी ही तेज है। इनके अलावा उसमें और गुण भी क्या कम हैं ! सभी क्षेत्रों में तो वह उससे आगे ही रही है।

उस दिन संगीत में उसे द्वितीय पुरस्कार मिला तो उसे प्रथम। नृत्य में भी वही प्रथम आई।' रेखा को लगा वह वीणा के सामने कुछ भी नहीं है। वीणा ही सर्वथा विशाल के योग्य है और शायद मन ही मन वह उनसे प्यार भी करती है। 'छोड़ो भी इन बातों को,' उसने आगे सोचा, 'पर वह तो अच्छे धर्म-संकट में पड़ी है, इधर शरद, उधर विशाल।'

सात

उस दिन रेखा के यहां से लौटी तो वीणा का मन खिन्न था। रेखा से उसकी मित्रता बहुत पुरानी थी, परन्तु रेखा का इधर का व्यवहार उसे एकदम अच्छा नहीं लग रहा था। वीणा के ख्याल में रेखा एक ऐसी लड़की थी जिसके विचारों में उम्र के साथ-साथ परिपक्वता नहीं आई थी। प्रतिकूल वातावरण में रहने के कारण वह अपने ऊपर नियंत्रण नहीं रख पाई थी और गलत रास्तों पर चली गई थी। यही वह अवसर था जब उसमें सुधार लाया जा सकता था। यह तो तय था कि उस दिन की उसकी बातों ने रेखा पर कुछ प्रभाव डाला था और यदि रेखा ने ठीक कहा था तो अब वह अपने को सुधार भी रही थी। पर, जब तक शरद, रेखा और विशाल के बीच में है तब तक रेखा के उद्धार की कोई आशा नहीं। वीणा को एक ही साथ विशाल और रेखा दोनों पर तरस आया था। विशाल, वीणा ने सोचा, व्यर्थ ही रेखा के चक्कर में पड़ अपने को बरबाद कर रहे हैं। दो साल बीत गए और इस बीच कभी उसने ठीक से बातें तक नहीं कीं। कभी उनका क्लास छोड़ा, कभी उनकी राह से कतराई, तो कभी उन्हें अपने यहां आया देख घर में छिपी, तो फिर उनके जाने तक बाहर आने का नाम नहीं लिया। और तो और उसने इस शरद को खुश करने के लिए अपने साथियों से खुले आम कहा—"और लोगों को चाहे विशाल की पढ़ाई अच्छी लगती हो, मैं तो उनके क्लास में बोर हो जाती हूं।" ये बातें विशाल के कानों में पहुंची होंगी तो उनपर क्या बीती होगी? रेखा, वीणा ने सोचा, फिर भी बुरी लड़की नहीं है। गलती किससे नहीं हो जाती है। पर, वह अब भी सुधर जाए तो कोई बात बने। वीणा इन्हीं विचारों में लीन हाथ में एक पत्रिका लिए बैठी थी

कि दरवाज़े पर आवाज हुई।

"कौन ?" उसने बैठे-बैठे ही आवाज दी।

"क्या पढ़ रही हो दीदी ? ऐसी लीन हो जैसे समाधि लगाई हो।"

वीणा ने मैग्ज़ीन से अपनी दृष्टि हटाई और शरद की ओर देखते हुए कहा, "मैं एक कहानी पढ़ने लगी थी।"

"कैसी है दीदी ?"

"बहुत-बहुत अच्छी।"

"तब तो जरूर ही किसी बहुत पुराने लेखक की होगी।"

"नहीं, है तो नये लेखक की ही, पर अच्छे लेखक की है।"

"किसकी है ?"

"विशाल की।"

"कौन ? अपने विशाल ?"

"हां।"

"तो वे कहानी भी लिखते हैं। मुझे नहीं पता कि विशाल लेखक भी हैं।"

"तुम्हें लड़कियों से फुर्सत भी हो जो तुम किसीका पता रखो। विशाल एक अच्छे साहित्यकार हैं।"

"क्या शीर्षक है दीदी ?" शरद पत्रिका की ओर अपनी गरदन झुकाते हुए बोला।

"तीन-तेरह।"

"मतलब ?"

"मतलब तुम्हें नहीं समझ आएगा।"

"मारो गोली दीदी। अपने दिमाग में तो क्रिकेट और फुटबॉल के तमाम तिकड़म घुस जाते हैं वही बहुत है। कहानी और कविता इसके बस की बात नहीं। तुम एक काम करो, इस कहानी को रेखा के पास भेज दो। वह इसको पढ़कर प्रसन्न हो।"

"वह पढ़ चुकी है।"

"हूं !" शरद अपनी कुर्सी पर चौंक पड़ा।

"हां, पर इसमें चौंकने की क्या बात है ?"

"कब पढ़ी, कैसे पढ़ी ?"

"विशाल ने ही उसके पास भेजी थी।"

"असंभव। दीदी, तुम मुझे [illegible]

[illegible]

हाथ से पत्रिका छीन ली और उसे उलटने-पुलटने के बाद वह चिल्ला पड़ा—

"कहा न दीदी, तुम झूठ बोलती हो। यह पत्रिका तो आज से सात ही रोज पहले निकली है और विशाल दो महीने से बाहर है।"

"मैं व्यर्थ झूठ नहीं बोलती, पर यह कहानी विशाल ने ही रेखा को पढ़ाई है।"

"पर कैसे ?"

"यह कहानी दार्जिलिंग जाने के पहले ही लिखी गई थी।"

"हां, तो ?"

"तो यह कि रेखा ने कहानी की पांडुलिपि पढ़ी है।"

"कैसे ?"

"उन्होंने रेखा के पास पांडुलिपि को साफ-साफ लिख देने को भेजा था और उसने यह कहकर लौटा दिया था कि उसे समय नहीं है।"

"बेचारा विशाल !" शरद धीरे से बोला।

"बेचारा क्यों ? तुम्हें तो प्रसन्न होना चाहिए। तुम तो रेखा से प्यार करते हो !"

"प्यार और मेरी तो पुश्तैनी दुश्मनी है दीदी। तुम भी मुझे नहीं समझ सकी, यह आश्चर्य ही है।" शरद मुस्कराते हुए बोला।

"पर तुम्हीने तो रेखा को विशाल से अलग किया। तुम्हींने तो उससे उनका क्लास तक छुड़वाया ?"

"हां, यह सब ठीक है, पर इसके पीछे मेरा ध्येय कुछ और है।"

"शरद !" वीणा चीखी।

"दीदी !" शरद ने धीरे से कहा।

"तुम इतने गिरे हुए हो मुझे पता नहीं था।"

"और तुम्हारी रेखा कौन भली है दीदी ? जैसे को तैसा मिला।" और शरद खीसें निपोरकर, हो-हो करके हंस पड़ा।

"शरद, तुम भूलते हो कि रेखा तुमसे बहुत अच्छी है। रेखा तुम्हारे जैसे लोगों के चक्कर में पड़कर ही भ्रष्ट हुई थी और उसने अब अपने को सुधार भी लिया है। तुम उसे जैसी समझते रहे हो वह वैसी नहीं है। दो साल तक वह मेरे साथ रही है। मैं कहती हूं शरद, रेखा दिल से बहुत ही सरल है। वह एक बहुत भली लड़की है।"

"होगी। अपने को भली-बुरी से क्या मतलब दीदी ? अपने लिए तो भले-बुरे सब बराबर।" इतना कहकर शरद ने सिगरेट का अपना डिब्बा निकाला,

पर वीणा पर दृष्टि पड़ते ही उसे फिर अन्दर रख लिया।

"शरद !"

"बोलो, दीदी।"

"तुम रेखा के सामने भी सिगरेट पीते हो ?"

"याद नहीं, कभी पी कि नहीं, पर भरसक नहीं ही पीने का प्रयत्न करता हूं। आज्ञा हो तो एक पीऊं ?"

"नहीं, पर हो तुम बहुत चालाक !"

"यही तो अपनी सफलता का राज है दीदी। सबके समक्ष अपने असली रूप में ही आऊं तब तो हो चुका मेरा काम।"

"खैर, छोड़ो इन बातों को। मुझे तुमसे एक आवश्यक बात करनी है।" वीणा हाथ में पड़ी हुई पत्रिका को टेबुल पर रखते हुए बोली।

"नहीं दीदी। पहले मुझे अपनी बात कहने दो।"

"अच्छा भाई, पहले तुम ही अपनी बात कहो।" वीणा पैर मोड़कर, निश्चिन्त हो बैठ गई।

"दीदी, रेखा तुम्हारी दोस्त है न ?" शरद ने आरम्भ किया।

"हां, पर यह कुछ नई बात तो नहीं हुई।"

"दीदी, आजकल उसका कुछ अन्दाज़ नहीं लग रहा। कुछ दिन पहले तक तो उसने मुझपर खूब प्यार जताया। यहां तक कि जैसा तुम जानती हो उसने अपना पूरा इतिहास तक मुझपर खोल दिया। पर, इधर वह पकड़ में नहीं आ रही। क्या सोचती है, क्या बोलती है कुछ समझ में नहीं आता। कभी तो कहती है वह मुझे छोड़ नहीं सकती, मुझे प्यार करने को मजबूर है, कभी कहती है मेरे शरीर के किसी अंग का स्पर्श तक नहीं करो, कि मैं 'रेखा डियर' नहीं 'रेखा जी' हूं।" शरद एक ही सांस में सारी बातें बोल गया।

"तब ?" वीणा ने एक छोटा-सा प्रश्न किया।

"तब दीदी, यह कि तुम मेरी कुछ सहायता करो। मुझे लगता है उसे किसी-ने मेरे बारे में उल्टा-सीधा समझा दिया है। दीदी, बड़ी मेहनत से मैंने इस चिड़िया को फंसाया है, कहीं देखते ही देखते यह फुर्र हो गई तो···"

"शरद !" वीणा चीखी।

"दीदी !" शरद जैसे आसमान से गिरा।

"तुम भूलते हो तुम किसके सामने बातें कर रहे हो और तुम यह भी भूलते हो कि मैंने अभी-अभी रेखा के बारे में क्या कहा। अगर तुम ये बातें करने के

लिए ही यहां आए हो तो मुझे अफसोस है मैं तुम्हारी कोई बात नहीं सुन सकती। यह मेरा दुर्भाग्य है कि तुम दूर के ही सही, मेरे भाई होते हो।" इतना कहकर वीणा उठ खड़ी हुई। उसके उठते ही शरद भी अपनी कुर्सी से उठ गया और वीणा का हाथ पकड़कर उसे अनुनयपूर्वक बैठाते हुए बोला, "मुझे क्षमा कर दो दीदी। तुम तो जानती ही हो तुम्हारे सामने मैं बच्चे के समान हूं। लो मैंने अपनी बात लौटाई, तुम अपनी बात करो।"

"मुझे अब कोई बात नहीं करनी। अब मुझे तुमसे कोई आशा नहीं।" कुर्सी पर बैठते हुए वीणा उतरे चेहरे से बोली।

"नहीं दीदी, तुम्हें कहना ही पड़ेगा, तुम नहीं कहोगी तो मैं फिर कभी तुम्हारे यहां नहीं आऊंगा।"

"अच्छा तो सुनो, पर अब मुझे किसी अच्छे परिणाम की आशा नहीं। पहले यह बतलाओ कि तुम जो कुछ बोलोगे ठीक बोलोगे ?"

"ठीक ही बोलूंगा दीदी, तुम्हारी कसम। यह तो तुम जानती ही हो कि दुनिया में अगर मैं किसीसे डरता हूं तो केवल तुमसे।" शरद अपने पैरों को मोड़कर एक आज्ञाकारी शिष्य की मुद्रा में बैठ गया था।

"अच्छा पहले यह बताओ, तुम रेखा से कितना प्यार करते हो ?"

"ज़ीरो।"

"मतलब ?"

"मतलब, शून्य।"

"देखो, शरद, परिहास न करो। तुम भूल से ही सही, पर मेरी कसम खाए बैठे हो।"

"ठीक ही तो कह रहा हूं दीदी। अब झूठ कैसे बोलूं ? मेरा मतलब है मैं उसे ज़रा भी प्यार नहीं करता।"

"पर, क्यों ? रेखा सुन्दर है, गुणवती है...।"

"पर क्यों का जवाब क्या दूं ? प्यार अपने पल्ले पड़ा ही नहीं। आज तक किसीसे हुआ ही नहीं तो उसमें मेरा क्या दोष ?"

"कैसे जानते हो कि तुम्हें किसीसे प्यार नहीं हुआ ?"

"वाह दीदी! यह कौन बड़ी बात है ? कितनी बार पढ़ा है, प्यार में दर्द होता है, जलन होती है, तड़पन होती है। पर यह सब तो आज तक मुझे कभी हुआ ही नहीं। यहां तो चट मंगनी, पट विवाह।"

"मतलब ?"

"मतलब छोड़ो दीदी। जिस तरह मेरे दिमाग में कहानी, कविता का मतलब नहीं घुसता, उसी तरह तुम्हारी खोपड़ी मे भी इसका मतलब नहीं घुसेगा। खैर, अगला प्रश्न पूछो।"

"हां, तो तुम रेखा से प्यार नही करते?"

"नही दीदी, यह तो मैं स्पष्ट कर चुका हूं।"

"तब एक काम करो।"

"क्या काम दीदी? पर इतना याद रखना, मैंने केवल सच बोलने की कसम खाई है। किसी काम के करने या नही करने की नहीं।"

"खैर तुम्हारी मर्जी, पर मुझे इतना ही कहना है कि तुम जब रेखा मे प्यार ही नही करते, तब रेखा की राह से अलग हो जाओ।"

"असंभव दीदी।"

"शरद!"

"दीदी!"

"यह तुम भूलते हो कि हमारे विचारों में चाहे जो विभिन्नता हो, पर हम एक-दूसरे के बहुत नजदीक है और मैं उम्र मे तुमसे बड़ी भी हूं। इस नाते तुम्हें मेरी बातों की इज्जत करनी चाहिए।"

"यह ठीक है दीदी, पर तुम्हें यह भी सोचना चाहिए कि यह मेरी जिन्दगी का सवाल है। मैं रेखा को छोड़ दूंगा तो फिर करूंगा क्या?"

"जिन्दगी का सवाल? अभी तो तुमने कहा कि तुम रेखा से प्यार नहीं करते।" वीणा आश्चर्य से बोली।

"हां दीदी, पर मेरी जिन्दगी भी तो इन्ही सब सहारों पर चलती है। अगर मैं इसी तरह लडकियों को छोड़ता रहूं तो मैं जिन्दा कैसे रहूंगा?"

"शरद, तो क्या तुम्हारी जिन्दगी लड़कियों की भावनाओं से खिलवाड और अन्ततः उनकी लूट और बरबादी पर ही पलती है?" वीणा का आश्चर्य बढ़ता जा रहा था।

"जैसा समझो दीदी।" शरद ने छोटा-सा उत्तर दिया।

"ओह, मुझे आज ही मालूम हुआ कि तुम कितना गिरे हुए हो। बुरा न मानो शरद तो तुमसे बुरा शायद ही कोई व्यक्ति इस संसार में होगा।" वीणा ने उदास स्वर मे कहा।

"नही दीदी! मेरे भाई-बन्धु बहुत हैं। तुम्हारे और विशाल के समान तो कुछ ही लोग यहां मिलते हैं। बाकी दुनिया तो मेरे भाई-बन्धुओं मे ही भरी

पड़ी है।"

"खैर, तो तुम भी विशाल की इज्जत करते हो !" वीणा ने एक चैन की सांस ली।

"मैं ही क्या, कॉलेज का हर छात्र उनकी इज्जत करता है।"

"तब भी तुम्हें विशाल पर तरस नहीं आता ?"

"आता है दीदी, पर तरस आता है उनके भोलेपन पर। जानती हो दीदी, वे समझते हैं कि रेखा उनसे प्यार करती है और यह नहीं जानते कि रेखा मेरे जाल में आ गई है और मेरे रहते वह उनकी तरफ आंख उठाकर भी नहीं देख सकती।" फिर आगे बोला—"एक मजेदार बात बताऊं दीदी ?"

"बताओ।"

"तुम तो जानती हो कि रेखा की अंग्रेजी कुछ कमजोर है और उसकी क्या, अंग्रेजी तो हमारी भी चौपट है। उस दिन विशाल ने राधाकृष्णन् पर एक लम्बा-चौड़ा भाषण दे दिया तो अपने पल्ले कुछ पड़ा ही नहीं।"

"हां, हां, बात तो कहो।"

"हां, तो मैं कह रहा था कि रेखा के पिताजी ने उसे सलाह दी कि वह ट्यूशन पढ़े। रेखा के पिता ने विशाल से बातें की थीं और विशाल ने उसे प्रो० शर्मा से पढ़ाने की सलाह दी थी। रेखा के पिता ने विशाल से उस शाम प्रो० शर्मा के यहां चलने के लिए आने की भी प्रार्थना की थी। इसी बीच कॉलेज में रेखा से मेरी बातें हुईं। रेखा के द्वारा सब बातें मालूम होने पर मैंने उसे प्रो० मुखर्जी से पढ़ने की सलाह दे दी। जानती हो क्यों ? इस तरह मैं विशाल को नीचा दिखाना चाहता था।"

"तब क्या हुआ ?"

"तब हुआ यह कि शाम को विशाल रेखा के घर गए तो उसके पिताजी ने कहा कि रेखा कहती है कि वह प्रो० मुखर्जी से पढ़ेगी। विशाल तो समझ रहे थे कि रेखा उनसे प्यार करती है, बस बड़ी शान से बोले—नहीं, प्रोफसर शर्मा ही ठीक रहेंगे। इसपर जानती हो क्या हुआ दीदी ?"

"क्या हुआ ?"

"रेखा अपने कमरे के अन्दर से ही खीझकर बोली—'आपनि जान न बाबा। आपनि अन्योदेर कथा कि सुनछेन ?' (आप जाइए न पिताजी, आप दूसरों की बात क्यों सुनते हैं ?) बोलो तो दीदी, इस बात से विशाल पर क्या बीती होगी ?"

"उनपर क्या बीती होगी वह वे ही जानते होंगे या मैं ही समझ सकती हूं, तुम उसका ज़रा भी अन्दाज नहीं लगा सकते। खैर, यह सब छोड़ो, यह बताओ मेरी बात पर क्या सोच रहे हो ?"

"दीदी मैंने कहा न यह असंभव है।"

"तो तुम रेखा को नहीं छोड़ रहे हो ?"

"नहीं दीदी, यहां तो मुझे माफ करना होगा।"

"तो एक काम क्यों नहीं करते ? रेखा से तुम्हें प्यार तो है नहीं, तो किसी दूसरी लड़की को पकड़ लो।"

"नहीं दीदी, यही तो तुम नहीं समझती। मेरे लिए एक खेल को बीच में छोड़कर दूसरा प्रारम्भ करना उतना ही कठिन है जितना विशाल का रेखा को छोड़कर दूसरी लड़की से प्यार करना।"

"ओह !" वीणा ने दीर्घ श्वास खींचा।

"पर चिन्ता न करो दीदी। यदि तुम इतना कहती ही हो तो मैं एक प्रतिज्ञा करता हूं।"

"क्या ?"

"रेखा पर मैं कोई ज़ोर-ज़बर्दस्ती नहीं करूंगा। यदि वह स्वयं नहीं गिरी तो मैं उसे गिराने का प्रयत्न भी नहीं करूंगा।"

"खैर, मुझे इतने ही से बहुत खुशी होगी। और मुझे विश्वास है कि तब रेखा गिरेगी भी नहीं।"

"जो हो, यह तो तुम्ही कह सकती हो। पर मैं अपनी बात रखने का प्रयत्न करूंगा। अच्छा अब देर हुई, मैं चलूंगा।" शरद कुर्सी से उठते हुए बोला।

"ठीक है जाओ।" वीणा भी खड़ी हो गई।

वीणा के घर से निकलने के बाद शरद ने सोचा, अब वीणा से उसका काम नहीं हो सकता। उसे समझते देर न लगी कि वीणा भी रेखा को विशाल के करीब पहुंचाना चाहती है। रास्ते में एक पोस्ट ऑफिस मिला तो उसके दिमाग में एक बात आई। डाकखाने की बेंच पर बैठकर उसने एक चिट्ठी लिखी और एक लिफाफे में डाल उसे लेटर बॉक्स में छोड़ दिया।

आठ

दार्जिलिंग की धूप में आज चमक थी। आसमान साफ था और मौसम बहुत सुहावना लग रहा था। शाम के चार बज रहे थे। सुधीर और विशाल अपने होटल से घूमने के लिए निकल पड़े थे। 'जू' होते हुए वे माउन्टेनीयरिंग ट्रेनिंग कॉलेज पहुंचे, फिर वहां से गेस्ट हाउस होते हुए राजभवन की बगल से होकर माल रोड के चौराहे की एक बेंच पर बैठ गए। अगल-बगल की बेंचों पर बहुत से 'अप-टू-डेट' जोड़े जमे थे। कुछ लोग बगल के अस्तबल से घोड़े ले, गाइडों के साथ टहलने निकल रहे थे। एक घोड़े वाली औरत, अपने दो-तीन घोड़ों को एक छोकरे के हाथ में पकड़ा, स्वेटर बुनती हुई घूम रही थी। पीछे की तरफ, नीचे की ओर तिब्बती रिफ्यूजी सेन्टर था, जहां के घरों के बाहर तिब्बती बच्चे जोर-जोर से चिल्ला-चिल्लाकर कबड्डी का खेल खेल रहे थे। विशाल और सुधीर की बेंच पर उन दोनों के सिवा कोई और नहीं था। विशाल को उदास देख सुधीर ने आरम्भ किया— "दार्जिलिंग तुम्हें कैसा लग रहा है विशाल ?"

"अच्छा ही लग रहा है, पर सोचता हूं यह अकेले आने की जगह नहीं है।"

"अकेले ! क्या कहते हो, मैं जो तुम्हारे साथ हूं।" सुधीर को आश्चर्य हुआ।

"पुरुष का अकेलापन पुरुष ही दूर करता तो औरत की क्या आवश्यकता थी सुधीर ? अकेले आने से मेरा मतलब···।"

"तो औरतों की यहां क्या कमी है···देखो न सामने भी एक झुंड घूम रहा है, टके सेर तो बिकती हैं···।" सुधीर ने मजाक में कहा।

"फिर तुमने वही बात उठा ली न ?" विशाल बीच ही में बोल पड़ा, 'तुम नहीं जानते कि···।"

"जानता हूं बाबा, सब कुछ जानता हूं। जानता हूं कि मिस रेखा के अलावा कोई भी आपकी पार्श्वगामिनी नहीं बन सकती। अब तो खुश हो···।" सुधीर हड़बड़ाकर बोला।

"कितने बजे हैं सुधीर ?" थोड़ी देर चुप रहने के बाद विशाल बोला।

"पांच बजे हैं," सुधीर ने कहा, "और तुम्हारी घड़ी में ?"

"इसमें तो बारह बज रहे हैं।"

"बारह ?"

"हां, चाबी देना भूल गया था।" विशाल कलाई से घड़ी खोलकर उसमें चाबी देते हुए बोला।

"तुम सचमुच पूरे दार्शनिक हो।"

"दार्शनिक कोई दर्शनशास्त्र पढ़ने से नहीं होता सुधीर। मैं दार्शनिक बना दिया गया हूं। भगवान न करे मेरी किस्मत किसी और को भी मिले।"

"विशाल, कहो तो एक बात पूछूं ?"

"पूछो, तुमसे कोई पर्दा तो है नहीं।"

"तुम जरा यह तो बताओ कि क्या तुम रेखा से सचमुच प्यार करते हो ?"

"तुम्हारे बचपने पर मुझे कभी-कभी बहुत खीझ होती है सुधीर। तुम तो यह जानते ही हो कि गत दो साल के अन्तर्गत शायद ही किसी क्षण रेखा का ख्याल मेरे मन से गया हो। तुम यह भी जानते हो कि यह इस चिन्ता का ही प्रभाव है कि मुझे दार्जिलिंग में आकर शरण लेनी पड़ी है और तुमसे यह भी छिपा नहीं कि यहां आकर भी मैं उसे भूल नहीं पाया।" विशाल के चेहरे पर झुंझलाहट के भाव स्पष्ट थे।

"माफ करो विशाल। मेरा मतलब ऐसा कुछ नहीं था, मैं सिर्फ यह जानना चाहता था कि तुम रेखा से कितना प्यार करते हो ?"

"यह भी प्रश्न बड़ा बेढंगा है सुधीर। मेरे ख्याल से प्यार की कोई माप-तौल नहीं होती और न यह मात्रा में कम या ज्यादा होता है। अधकचरे या कृत्रिम प्यार की मात्राएं ही भिन्न-भिन्न हो सकती हैं। सच्चे प्यार की एक ही स्थिर मात्रा है और वह अमाप्य है। सच्चा प्यार कोई कुएं का जल नहीं जिसे चुल्लुओं में माप लो, यह तो सागर की वह विशालता है जो अथाह और अमाप्य है।"

"मुश्किल है।" सुधीर धीरे से बोला।

"क्या मुश्किल है ?" विशाल ने प्रश्नसूचक दृष्टि उठाई।

"प्याले की गहराई में सागर की विशालता को उंडेल देना।"

"मतलब ?"

"मतलब रेखा और तुम। तुम्हारा दिल सागर की तरह विशाल और उसका प्याले के समान लघु। मेरे ख्याल में सारी कठिनाइयों के मूल में यही है।"

"गलत बात है सुधीर। जिस तरह सच्चा प्यार मात्रा में स्थिर होता है, उसी

तरह सभी दिलों मे भावनाएं जब उमड़ती है तो वे एक ही स्वरूप पकड़ लेती हैं वे एक ही गहराई और एक ही उद्दामता रखती है। दिल बड़े और छोटे तभी तक हैं जब तक उनमें प्यार का संचार नही हुआ। सच्चे प्यार के ज्वार में सुधीर, सभी दिल सागर बन जाते है, प्यार की बाढ़ को अपने में समेट लेना प्याले के वश की बात नहीं।"

"तब रेखा का दिल तुम्हारे दिल की तरह ही विशाल क्यों नही हो गया विशाल ?"

"क्योंकि रेखा के दिल में अभी तक प्यार का ज्वार जगा ही नही, क्योंकि रेखा ने अभी तक प्यार किया ही नहीं।"

"शरद से ?"

"हो···हो-हो···" विशाल हंस पड़ा, "तुम क्या समझते हो सुधीर कि रेखा शरद से प्यार करती है ? रेखा का शरद के लिए आकर्षण सुधीर, शरद के किसी आन्तरिक गुण पर आधारित नही। वह तो उसके सस्ते रूप, हाव-भाव और हल्की करामातों पर फिसली है। सच्चे प्यार का मूल बाह्य आकर्षण के छिछले जल में नही जम सकता। उसके लिए तो आन्तरिक विशेषताओं की अनन्त जल-राशि की आवश्यकता है। और तुम तो जानते हो शरद का अन्तर सड़ा हुआ है। दलदल और मरुभूमि में कोई बिरवा पैदा भले हो जाए पनप तो वह सकता नहीं। दूसरी बात यह कि रेखा तो मुझसे ज्यादा संकट की स्थिति में है। तुम क्या समझते हो कि रेखा के दिल मे मैं कही नही हूं ? किसीको चाहकर उसे सदा के लिए भुला दिया जाए, यह तो हो ही नही सकता। दूसरी बात यह कि रेखा यदि शरद के जादू पर मोहित है तो मेरा मोह भी उसे कम नही। इसे आत्म-प्रशंसा नही मानो तो शरद की तुलना मे मेरा पलड़ा तो अवश्य ही भारी है और फिर यह कैसे सम्भव है कि रेखा को मेरा ध्यान ही नही हो।"

"छोड़ो विशाल, शरद के साथ तुम्हारी तुलना ठीक नहीं जंचती। रेखा के लिए शरद भले ही देवता स्वरूप हो, हम लोगों के मध्य उसका उल्लेख अच्छा नहीं लगता।"

"यह तो मैं भी जानता हूं सुधीर। पर, मुझे कहना केवल इतना था कि रेखा इन दिनों दुविधा की स्थिति मे है। शरद और मेरे बीच वह झूल रही है। उसने ऊपर-ऊपर तो मुझे निकाल फेंका है, पर भीतर-भीतर वह मुझसे बच नही पा रही। उसकी स्थिति मुझसे कुछ कम दयनीय नही और यह तो भविष्य ही बताएगा कि इस स्थिति का किसके लिए क्या परिणाम होगा।"

यहां पर आकर विशाल और सुधीर कुछ देर के लिए चुप हो गए। उनके सामने एक दम्पति गुज़र रहे थे। पति और पत्नी एक दूसरे के हाथ में हाथ डाले बड़े आनन्द से बातें करते चले जा रहे थे। उनके गुज़रते ही विशाल ने एक लम्बी आह खींची।

"तुम्हारे ख्याल से विशाल, जीवन में पत्नी बहुत आवश्यक है क्या ?" सुधीर एकाएक पूछ बैठा।

"नहीं, मेरे ख्याल में वह अनिवार्य है।"

"अच्छा।"

"इसमें आश्चर्य की क्या बात है ?"

"आश्चर्य नहीं, पर मेरे ख्याल से विवाह की संस्था ही अनावश्यक है!"

"मैं ऐसे लोगों में से नहीं जो नित्य नये प्रयोग करते हैं और हर प्रयोग के बाद पुराने परिणाम पर ही आ पहुंचते है। खैर, छोड़ो इन बातों को, कम से कम इतना तो जानते हो कि मुझे पत्नी का सुख नहीं बदा है।"

"लगता तो मुझे भी ऐसा ही है, अगर तुम्हारी आदर्शवादिता का रूप यही रहा तो रेखा हाथ आने से रही और अन्य कोई लड़की भी तुम्हें चारा नहीं डालेगी।"

"दूसरी का कोई प्रश्न ही नहीं। रेखा नहीं तो फिर कोई नहीं।"

"हे भगवान!" सुधीर ने एक लम्बी सांस खींची।

"क्यों ?"

"क्योंकि तुम्हारा मर्ज़ ला-इलाज है!"

"वह तो है ही। तुम क्या समझते हो कि दार्जिलिंग की ये पहाड़ियां मेरे दिल से रेखा की याद निकाल देंगी ? खैर चलो, अब होटल चलें, मुझे ठंड लग रही है।" कहते-कहते विशाल उठ खड़ा हुआ।

सुधीर भी उठ गया और दोनों धीरे-धीरे अपने होटल की ओर बढ़े।

होटल में आकर नाश्ते-पानी से निश्चिन्त होने के बाद सुधीर विशाल के कमरे में आ बैठा।

सुधीर के आने पर विशाल अपनी चारपाई पर स्थिर होते हुए बोला—"हम लोग थोड़ी देर पूर्व पत्नी और विवाह की बातें कर रहे थे न ? मुझे इस सम्बन्ध में एक घटना याद आ रही है—

" जब मैं बी० ए० में पढ़ रहा था, एक बार अपनी बुआ के यहां गया। वहां

पड़ोस में एक लड़की रहती थी। मैं एक दिन खाना खाने बैठा ही था कि वह आ गई। मेरी बुआ ने उसे मेरे लिए पंखा झलने को कहा, क्योंकि खाना गर्म था। वह पंखा झलने बैठ गई। उसका पंखा झलकर मुझे खिलाना मुझे बहुत अच्छा लगा और मैंने एक अभूतपूर्व आनन्द का अनुभव किया। मुझे पहले-पहल उसी समय जिन्दगी में पत्नी के महत्त्व का भान हुआ।"

"फिर ?"

"फिर क्या ?"

"मेरा मतलब पंखा रुकने के बाद क्या हुआ ?"

"फिर क्या होता ? मेरा खाना समाप्त हुआ, मैं उठकर बाहर आ गया।"

"और कोई बात नहीं ? तो, तुम पुराने बुद्धू हो।"

"क्यों ?"

"अरे, क्यों यह कि खाने के बाद कुछ प्यार-व्यार की बातें करते, नाम-पता पूछते और क्या ?"

"ओ, तो तुम यह समझते हो कि मैं तुम्हारे समान दिल हथेली पर लिए फिरता हूं।"

"ओह, यह बात है ! खैर देखें यह आदर्शवादिता तुमको कौन-सा स्वर्ग देती है !" सुधीर मजाक के लहजे में बोला और फिर गम्भीर हो गया। इसी समय दरवाजे पर दस्तक हुई और विशाल बोला—"देखो तो कौन है ?"

सुधीर ने पर्दा उठाकर देखा तो होटल का ब्वॉय एक बन्द लिफाफा लिए खड़ा था। सुधीर ने उसे हाथ में ले लिया और अन्दर आ गया।

"किसकी चिट्ठी है सुधीर ?" विशाल ने प्रश्न किया।

"तुम्हारी और किसकी ?"

"कहां से आई है ?"

"यह तो नहीं लिखा, पर मुहर कलकत्ते की है।"

"कलकत्ते की ?" विशाल चौंककर चारपाई पर उठ बैठा।

"पर तुम इस तरह उतावले क्यों हो गए ?" सुधीर ने पूछा।

"क्योंकि यह वही चिट्ठी होगी जिसकी मैं प्रतीक्षा कर रहा था। खैर, तुम शीघ्र खोलो।"

सुधीर ने पत्र खोलकर कहा, "यह तो शरद की चिट्ठी है, तुम इसीकी प्रतीक्षा कर रहे थे ?"

'ऐं।" विशाल लगभग चिल्ला पड़ा।

"पढ़ूं ?"

"खैर, पढ़ो, पर शरद ने क्यों यहां चिट्ठी भेजी ?" विशाल धीरे-से बोला।

सुधीर ने पत्र पढ़ना आरम्भ किया—

कलकत्ता-6

मान्यवर,

सप्रेम प्रणाम।

आप शायद मुझे नहीं पहचनाते हों, या पहचानते भी हों। मेरा नाम शरद है और मैं रेखा का सहपाठी हूं। आप बुरा न मानें तो मैं कहूं कि मुझे यह पता है कि आप रेखा से प्यार करते हैं। मैं आप ही के हित के लिए यह सब लिख रहा हूं। आपको जानकर आश्चर्य होगा कि आप जिस रेखा को स्वर्ग की देवी समझ रहे हैं वह एक बहुत ही गिरी हुई, पतित लड़की है।

उसके इतिहास पर प्रकाश डालकर मैं आपका दिल नहीं तोड़ना चाहता पर मैं कसम खाकर कह रहा हूं कि वह आपके सदृश व्यक्ति के सर्वथा योग्य नहीं है।

आपका ही
शरद

"चिट्ठी को फाड़कर फेंक दो सुधीर।"

"तुम अब भी रेखा से प्यार करते हो विशाल ?"

"सुधीर, तुम विचित्र हो या फिर बहुत निरीह। या तुम सब कुछ समझकर भी नहीं समझने का नाटक करते हो। अगर तुम्हें किसीसे सच्चा प्यार होता तो तुम यह प्रश्न नहीं पूछते। प्यार कोई अपने वश की बात नहीं, जो कल किया आज नहीं किया। मैं अब भी क्या अनन्तकाल तक रेखा को प्यार करता रहूंगा।"

"विशाल, यह तो मुझे भी लगता रहा है कि रेखा कुछ अच्छी लड़की नहीं है। उसके चाल-ढाल मुझे आज तक जंचे नहीं। पर, तुम्हारे डर से मैंने कभी ऐसी बात नहीं कही।"

"सुधीर, तुम्हारे कहने या नहीं कहने से कुछ अन्तर नहीं पड़ता। मैं कभी भी मनुष्य को पूर्ण नहीं मानता। मैं यह मानकर चलता हूं कि मनुष्य कमजोर है और वह गलती कर सकता है। हम या तुम या हममें से कुछ लोग वातावरण या पारिवारिक संस्कार या परिस्थितियों की अनुकूलता के चलते अच्छे हो सकते हैं, पर सभी लोग अच्छे हों इसकी हम आशा कैसे कर सकते हैं ? और

सुधीर, बुरा कौन नही है ? तुम्हारे देवता और तुम्हारे अवतार भी तो दूध के धुले नही हैं। हां-हां वे ही देवता जिनको आदर्श मानकर तुम अपने आदर्शों का निर्माण करते हो।"

"पर विशाल, मेरी समझ में नहीं आता कि तुम एक बुरी लडकी को अपनाकर करोगे क्या ? इससे तुम्हारा जीवन सुखी रहेगा क्या ?"

"सुधीर, तुम्हारी समझ में नही आता तो मैं तुम्हें समझा भी नही सकता। पर तुम इतना जान लो कि बुरा हमेशा के लिए ही बुरा नहीं हो जाता। इस शरीर के अन्दर आत्मा एक ऐसी वस्तु है जिसपर संसार की कोई बुराई अपना रंग नहीं चढा पाती। तुम्हें यह पता नही है कि दिल से बुराई की राह पर चलना कोई भी नही चाहता। संसार का बड़े से बडा पापी भी अपने दिल के अन्दर यह समझता है कि वह जो कुछ कर रहा है, वह गलत है और उसकी जिन्दगी के बहुत सारे एकाकी क्षण ऐसे आते है जिनमें वह अपने कृत्यों के लिए पश्चाताप करता है। सद्‌गुण सभी को प्रिय होते हैं सुधीर, और दुर्गुणी भी गुणियों के समक्ष सिर झुकाने में अपना सौभाग्य समझते हैं। महात्माओं, योगियो और संतों को देखते ही हमारा सिर क्यों श्रद्धा से झुक जाता है ? क्या, इसलिए नही कि हम समझते हैं कि हम जिस मलिनता से, जिन बुराइयों से अपने को पृथक नहीं कर पाए उनसे ये ऊपर उठ गए है ? हम अपनी सभी धरोहरों से प्यार कर सकते है, अपने गलित और विकृत अंगों से भी हमे मोह होता है पर अपने दुर्गुणों से कभी हमे आन्तरिक सहानुभूति नहीं होती। मनुष्य परिस्थिति-वश बुरा बन जाता है। पर वह हमेशा ऐसे अवसर की तलाश मे रहता है, हमेशा जाने या अनजाने एक ऐसी शक्ति का इच्छुक रहता है जिसके द्वारा वह अपने दुर्गुणों को निकाल फेंके।"

"पर तुम्हारे इस व्याख्यान का लक्ष्य क्या है ?" सुधीर ने बीच ही मे रोका।

"लक्ष्य तुम्हें यह बताना है कि रेखा चाहे बुरी हो, चाहे जितनी पतित हो, पर मुझे विश्वास है कि मैं अपने सच्चे प्यार द्वारा उसका हृदय परिवर्तित कर दूंगा। मेरे पास आने के साथ ही रेखा, रेखा नही रहेगी, यह एक ऐसा रत्न बन जाएगी जिसके प्रकाश मे मेरा सारा व्यक्तित्व जगमगा उठेगा, वह नये रूप में निखर आएगा सुधीर।"

"विशाल।" सुधीर को आश्चर्य हो रहा था।

"हां, सुधीर, तुम प्यार की प्रेरक शक्ति से परिचित नही। प्यार प्रेरणा का दूसरा रूप है। मैं ऐसे व्यक्तियों में से हूं जिन्हें यदि मन चाहा प्यार मिल जाए

तो वे तारों को अंगुलियों मे भर लें, सागर को प्यालों में कैद कर लें और सूर्य और चांद को गले में लटका लें।"

"विशाल तुम होश में तो हो ?" सुधीर ने फिर टोका।

"होश में हूं सुधीर। एकदम होश में हूं। तुम मेरी बातों को कल्पना की कोरी उड़ान नहीं समझो। तुम्हे तो यह पता ही होगा कि संसार के जितने महान् व्यक्ति हुए हैं, उनमें अधिकांश की उपलब्धियों के पीछे या कहो सभी के पीछे नारी की प्रेरणा किसी न किसी रूप में रही है। यह प्रेरणा चाहे चुम्बन के रूप में रही हो या चांटे के रूप मे, पर नारी सभी निर्माणों के मूल मे है। उसके महत्त्व की उपेक्षा हम कभी नहीं कर सकते।"

"तब तुम चांटे को ही क्यों नही अपना लेते ?"

"बहुत ठीक है सुधीर। पर चांटे में एक खतरा है। अगर उसकी चोट को तुम झेल गए तब तो सोने की तरह निखर आओगे, पर कहीं पहली ही चोट में टूट गए तो फिर कही के न रहोगे।"

"तो तुम अपने को इतना कमज़ोर क्यों समझते हो ?"

"मैं कमज़ोर नही सुधीर, मुझपर पड़ने वाला चाटा ही ज्यादा तगडा है, क्योंकि जो एक तरफ मुझे चाटा देने को प्रस्तुत है वही दूसरी तरफ किसी दूसरे के लिए चुम्बन की भेंट लेकर भी तैयार है। यह दोहरी मार मैं क्या कोई भी बर्दाश्त नही कर सकता।"

विशाल यहीं पर आकर रुक गया और सुधीर से चाय का ऑर्डर देने को बोला। चाय आते ही सुधीर ने टोका—"रेखा की याद फिर आ गई विशाल ?"

विशाल ने चाय की चुस्की लेते हुए कुछ उदास होकर कहा—

"उसकी याद जाती ही कहा है सुधीर जो आने का प्रश्न उठता है ? खैर, तुम मेरे बारे में क्या सोचते हो ?"

"तुम्हारे बारे मे, मतलब ?"

"मतलब मेरे भविष्य के बारे में तुम्हारा क्या ख्याल है ?"

"तुम्हारा भविष्य मुझे अन्धकारमय दीखता है और सच पूछो तो मुझे लगता है अब तुम्हारा कोई भविष्य ही नहीं है। वर्तमान तो तुम्हारा पहले से ही चौपट है। अब अपने भूत पर ही सब्र करो।"

"मजाक की बात नहीं सुधीर। मैं बहुत गम्भीर हूं।" विशाल ने चाय के खाली प्याले को होंठों से हटा टेबुल पर रखते हुए कहा।

"गम्भीर तो मैं भी हूं, पर तुम्हारा भविष्य मैं स्पष्ट देख रहा हूं। रेखा को तुम छोड़ोगे नही। वह अनेक बार तुम्हें दुत्कार चुकी है पर तुम्हें लगता है यह सब प्यार का ही नखरा है। दूसरी तरफ रेखा शरद को छोड़ेगी नही और अन्त में जब तुम देखोगे कि रेखा तुम्हारी नही रही तो बस तुम्ही समझो क्या होगा।"

"तब तो मैं सदा के लिए टूट जाऊंगा सुधीर।" विशाल ने गहरी सांस खींची और बाकी बची चाय को एक घूट मे साफ कर गया।

"पर, सुधीर," विशाल आगे बोला, "क्या तुम यह समझते हो कि रेखा मुझे इतना बड़ा दंड देगी ? उसे मैं कितना प्यार करता हूं, वह यह जानती है। मैं मानता हूं कि मैंने खुले शब्दों में अपने प्यार की दुहाई उसके सामने नही दी है। पर, प्यार की बात तो केवल मुंह से ही नही कही जाती, अगर दुनिया मे प्यार की और भाषाएं ठीक बतलाई गई है, तो रेखा अब चाहे जो करे पर हम दोनों अपने प्यार को पूरी तरह एक-दूसरे तक पहुंचा चुके है। रेखा मे सुधार होगा सुधीर, मुझे विश्वास है। वह मुझे धोखा नही देगी। यदि वह मेरी नही होगी तो किसी दूसरे की भी नही होगी। रेखा मुझे तोड़ेगी नही सुधीर। रेखा कृतघ्न नही है।"

"रेखा क्या करेगी यह तो तुम्हारी किस्मत जाने, पर मैं पूछना चाहता था कि तुम आज किसकी चिट्ठी की इतनी बेसब्री के साथ प्रतीक्षा कर रहे थे ?"

"रेखा की।" विशाल ने कहा।

"रेखा की !" सुधीर ने आश्चर्य से मुंह फाड़ दिया।

"हां, मैंने उसे एक चिट्ठी लिखी थी, सोचा उसका जवाब आएगा।" विशाल ने धीरे से कहा।

"ओ, तो यह अक्ल जनाब की अब खुली है। खैर, देर आए दुरुस्त आए।"

"देर आए दुरुस्त आए नही सुधीर, मैंने रेखा से अन्तिम रूप में यह जानना चाहा है कि उसे मेरी कुछ भी चिन्ता है या नही। यदि वह चाहती है कि हम लोगों का सम्बन्ध बना रहे तो पत्र लिखेगी।"

"यदि उसने पत्र नही लिखा तो ?"

"नही लिखा तो फिर मतलब साफ है।" और विशाल उदास हो गया।

"खैर छोड़ो, पत्र आने न आने से क्या होता है। एक बात बतलाओ, आज-

कल तुमने फिर अपने स्वास्थ्य पर ध्यान देना छोड़ दिया है।"

"क्यों?"

"पता है रात के दस बज गए?"

"अच्छा उठो।" और दोनों सोने चले गए।

नौ

उस दिन के बाद वीणा की मुलाकात रेखा से कोई दो दिनों तक नहीं हुई। वीणा का मन रेखा से अब भी कुछ खिन्न था और उसके यहां वह जानबूझकर नहीं गई थी। तीसरे दिन सवेरे, वीणा नाश्ते के बाद बैठी ही थी कि रेखा पहुंच गई। वीणा ने उसे सामने की कुर्सी पर बैठाकर नाश्ते के लिए पूछा, पर उसने मना कर दिया। रेखा का मन उदास था। वीणा ने समझा उसके इधर दो रोज़ तक उसके यहां नहीं जाने से रेखा का मन गिर गया है। वीणा ने रेखा का हाथ पकड़कर उससे उसकी उदासी का कारण पूछा तो लगा रेखा रो पड़ेगी।

"क्या बात है रेखा? आखिर कुछ बोलो तो।" वीणा ने ज़िद्द की।

"वीणा, अब मेरा उद्धार सम्भव नहीं। मैं जिन्दगी-भर कलंकिनी ही रहूंगी। इस तरह जीने से मर जाना ज्यादा अच्छा समझती हूं।" इतना कहते ही रेखा फूट पड़ी।

"पर, इसमें अधीर होने की क्या बात है? पहले बात तो बताओ?" वीणा ने रेखा को झकझोरते हुए कहा।

"नहीं वीणा, मैं अब तुम्हारे साथ रहने योग्य नहीं। मुझे सारा संसार बुरा समझता है। मेरे साथ तुम भी बदनाम हो जाओगी।" रेखा अपना सिर अपने घुटनों में छुपाकर सिसकियां लेती जा रही थी।

"मैं कहती हूं रेखा, तुम पागल क्यों बन रही हो? तुम जानती नहीं यह दुनिया डरने वालों के लिए नहीं है। मुझे किसी भी बदनामी और बेइज्जती का डर नहीं। यदि हम अच्छे रहेंगे तो दुनिया की उठी हुई उंगली खुद एक दिन गिर जाएगी। पर पहले बात तो बताओ।"

"लो देखो, और रेखा ने एक पत्र वीणा की ओर बढ़ा दिया। वीणा ने उसे खोलकर पढ़ा—

स्थानीय,

रेखा रानी,

सचमुच तुम बहुत खूबसूरत हो। सच कहूं, तुम्हें देखकर तो मैं दिल थामकर रह जाता हूं। तुम्हे पता नहीं मैं कितने दिनों से तुम्हारे प्यार में पागल हूं। पर मेरे दिल की रानी, यह तो बताओ उस शरद में ही क्या भरा हुआ है जो तुम उसके पीछे पागल हो रही हो। अगर तुम मेरे दिल मे उतरकर देखती तो तुम्हें मालूम होता कि मैं सौ शरद से भी अधिक तुम्हें प्यार दे सकता हूं। आशा है तुम अवश्य ही पत्र का जवाब दोगी, नही तो मुझे दूसरा पत्र देना पड़ेगा।

—तुम्हारा
केशव

"हूं।" वीणा का मुंह गुस्से से लाल हो गया और उसने चिट्ठी फाड़कर फेंक दी।

"कौन है यह केशव ?" वीणा कड़की।

"मेरे मुहल्ले का है, उसने शरद को मेरे यहां आते-जाते देखा है।"

"मुहल्ले का है ! काजल की कोठरी मे रहोगी तो धब्बों का डर तो छोड़ना ही पड़ेगा। शरद के साथ रहकर क्या तुम अपनी प्रशंसा खोज रही थी ? तुम्हें क्या पता कि शरद कितना गिरा है, और दूसरों का उसके बारे मे क्या ख्याल है ? अभी दो रोज़ पहले शरद मेरे यहां आया था। उसकी बातों से तो लगा कि मैं उसके मुह पर थूक दू, पर मुझे अफसोस है कि वह मेरा भाई लगता है। अभी तो मुहल्ले वाले लिखते है, कल से पूरा शहर तुम्हें प्रेम-पत्र लिखेगा।" वीणा जैसे गुस्से मे लाल हो रही थी।

"वीणा, मेरी अच्छी वीणा मुझे बचा लो। मैं अब पहले वाली रेखा नही। मैंने अपने को सुधार लिया है वीणा, अब फिर मेरा मुह काला न होने दो।" कहकर रेखा वीणा की गोद मे गिर पड़ी।

वीणा की आखों मे आंसू आ गए और उसने रेखा के बालो पर हाथ फेरते हुए कहा—

"घबराओ नहीं रेखा, अभी कुछ नही बिगड़ा है। सब कुछ ठीक हो जाएगा।"

"वीणा मेरी अच्छी वीणा !!" और रेखा ने वीणा की गोद से अपना

अश्रुपूर्ण मुख निकालकर भरी-भरी आंखों से उसकी ओर देखा।

"हां, रेखा, सब ठीक हो जाएगा। तुम्हें केवल एक काम करना है।"

"क्या ?" रेखा सीधी होकर अपनी कुर्सी पर बैठ गई। उसकी आंखें अब भी भीगी और लाल थीं।

"तुम शरद को सदा के लिए छोड़ दो। आज की तारीख से ही तुम्हारा उससे मिलना-जुलना बंद।"

"वीणा। पर मेरा प्यार !" रेखा लगभग चिल्ला पड़ी।

"प्यार-व्यार कुछ नहीं। मैं जानती हूं तुम शरद से प्यार नहीं करती। उससे कोई प्यार नहीं कर सकता। तुम्हें उससे प्यार का मात्र भ्रम हो गया है। तुम चाहो तो उसे शीघ्र भूल जाओगी।"

"वीणा। मैं बिना प्यार के मर जाऊंगी। मुझे इतना बड़ा दण्ड नहीं दो।" रेखा की सिसकियां फिर आरम्भ हो गई थीं।

"तुम नहीं मरोगी। अभी तुमको प्यार मिला ही कहा है ? तुम्हें प्यार ही करना है तो विशाल को अपना लो। उस बेचारे का भी उद्धार हो जाएगा।"

"पर वीणा, केवल चाहने से कोई किसीको प्यार करने लगेगा ? मेरी स्थिति पर ध्यान दो। तुम मुझसे मजाक न करो।" आंसुओं से भरा रेखा का मुख प्रश्नचिह्न बना हुआ था।

"चाहने और न चाहने की बात नहीं रेखा। तुम अपने दिल के अन्दर विशाल से ही प्यार करती हो, शरद से नहीं। शरद के लिए तुम्हारे दिल में केवल मोह हो गया है। तुम शरद के मोह को अपने दिल से निकाल फेंको। उससे मिलना-जुलना बन्द कर दो। विशाल के लिए तुम्हारा प्यार स्वयं उमड़ आएगा।" वीणा एक सांस में सभी बातें बोल गई।

"वीणा !" रेखा का स्वर कुछ आश्चर्य और कुछ दुःख मिश्रित था।

"हां रेखा, फूल के रहते कोई कांटे को नहीं अपना लेता। विशाल, विशाल है उनके साथ शरद की कोई तुलना नहीं।"

"वीणा, तुम्हारी बातें कुछ ठीक लग रही हैं। मैंने भी यह कई बार अनुभव किया है कि विशाल मेरे दिल के किसी कोने में हमेशा बैठे रहे हैं। लाख चाहकर भी मैं उन्हें अपने दिल से निकाल नहीं पाई हूं।" रेखा ने धीरे से कहा।

"और यही कारण है कि तुम बच भी जाओगी। मारो गोली शरद को। चलो विशाल को पत्र लिखें और बेचारे का दार्जिलिंग प्रवास समाप्त हो।"

"अभी नहीं वीणा, इतनी जल्दी नहीं। तुम दोपहर को मेरे घर आओ तो

मैं तुम्हें एक चीज दिखाऊं ।" और रेखा उठ खड़ी हुई ।

"ठीक है । तो क्या तुम अभी चली जाओगी ? इतनी जल्दी ?"

"हां वीणा, मैं जल्दी में मां के बिना कहे चली आई हूं ।" और रेखा दरवाजे से बाहर आ गई ।"

रेखा वीणा के यहां से लौटी तो मां दरवाज़े पर ही खड़ी थी । रेखा को देखते ही पूछ बैठी—"कोथाय गिछिले ?" (कहां गई थी ?)

"वीणादेर बाड़ी ।" (वीणा के घर) और कहते-कहते रेखा दरवाज़े के अन्दर घुस गई ।

"शुनो ।" मां ने पीछे से आवाज दी ।

"केनो ?" (क्यों ?)

"तूमि केशव के जानो ?" (तुम केशव को जानती हो ?)

केशव का नाम सुनकर रेखा का दिल कांप गया । पर वह अपने को संयत कर बोली—

"केनो मां ?" (क्यों मां ?)

"तूमि ओके डेके छिलो ?" (तुमने उसको बुलाया था ?)

"नेई तो मा !" (नहीं तो मां)

"जाव ।" (जाओ)

रेखा जाने लगी फिर जाते-जाते रुक गई और मुड़कर बोली, "कि होलो मा ?" (क्या हुआ मां ?)

"किछु नेई । ओ एसे छिलो । बिथलो जे आमि रेखा संगे दाखा कोरबो । आमि जानि जे ओर 'करेक्टर' भालो नेई । से आमि ओके भालो करे बोकलाम, आवार ओ पलाई गेलो ।" (कुछ नहीं, वह आया था । बोला कि मैं रेखा से भेंट करूंगा । मैं जानती हूं कि उसका 'कैरेक्टर' अच्छा नहीं सो मैंने उसको डांटा और वह भाग गया ।)

रेखा इसके बाद अन्दर आ गई । वह समझ गई कि यह शरद के साथ का ही प्रभाव है कि केशव जैसे लोग इतना आगे बढ़ गए हैं । उसने मन ही मन वीणा की समझदारी पर उसे लाख-लाख बधाइयां दीं । अपने कमरे में आकर उसने अन्दर से दरवाजा बन्द कर लिया और कपड़े बदलकर पलंग पर लेट गई । उसके सामने दीवार में आदम-कद आइना जड़ा था जिसमें उसका पूरा शरीर दिखाई पड़ रहा था । वह एक सफेद साड़ी और सफेद ब्लाउज पहने हुए

थी और उसके बड़े-बड़े केश खुले पड़े थे। पलंग के नीचे पड़ी विशाल की चिट्ठी उसने खींच ली और उसे दोनों हाथों से अपने कलेजे से लगा लिया और एक मीठे आनन्द का अनुभव कर बुदबुदाने लगी—'वि······शा······ल।' इसके बाद उसने चिट्ठी को उठा होंठों से लगा लिया और कोई दो मिनटों तक उसे वहीं रखे रही। इसके बाद उसने चिट्ठी को खोला और उसे शुरू से अन्त तक पढ़ गई।

चिट्ठी को पढ़ने के बाद रेखा ने उसे फिर तकिये के नीचे रख दिया और सोचने लगी।

हां, दो वर्ष की ही तो बात है। ठीक ही लिखा विशाल ने। कोई दो वर्ष हुए जब पहले-पहले वह इस कॉलिज में गई। पहली ही घंटी थी। दर्शनशास्त्र का क्लास लड़के और लड़कियों से खचाखच भरा था। सब आपस में फुस-फुस कर रहे थे—विशाल का क्लास,···विशाल का क्लास। उसे यह उतावलापन अच्छा नहीं लगा और उसने वीणा से धीरे से पूछा, "कौन है यह विशाल? कौन है यह जो सभी लोगों में ऐसी व्यग्रता मची है?"

"अब तो आ ही रहे हैं, देख ही लेना। जैसे तुम इस कॉलेज में नई आई हो वैसे ही वे भी नये हैं।" वीणा ने चुटकी ली और तभी विशाल ने कमरे में प्रवेश किया। सभी लोग मंत्र-चालित से खड़े हो गए और फिर पूरे कमरे में ऐसी शान्ति छा गई मानो वहां मनुष्यों का नहीं मुर्दों का जमघट हो। इसके बाद जो विशाल ने बोलना आरम्भ किया तो सबके-सब मुंह बाए चित्र-लिखित से उनकी ओर टकटकी लगाए बैठे रहे। 'माई गॉड!' रेखा ने सोचा था, 'क्या तरीका है बोलने का, कैसे सुन्दर-सुन्दर शब्द, वाक्यों का कैसा सुन्दर विन्यास और उसके ऊपर से लगता कि होंठ जैसे सटते ही नहीं, जैसे जीभ नहीं हुई टेप-रेकॉर्डर हो गई। शब्द पर शब्द, वाक्य पर वाक्य जैसे एक पर एक अन्दर से फिसले चले आ रहे थे। न सोचने की आवश्यकता, न समझने की। इसके ऊपर, चेहरे पर वह चमक, आंखों में वह ज्योति कि तबीयत करे देखते ही रह जाएं। और पूरे घंटे-भर तो वह उनके चेहरे की ओर टकटकी ही बांधे रह गई। क्या पढ़ा, क्या सुना, यह तो पता नहीं, पर जब क्लास समाप्त हुआ तो उसे लगा यह आसमान से जमीन पर आ गई। विशाल ने रजिस्टर उठाया और एक मिनट में क्लास से बाहर हो गए, जैसे कोई बिजली बादलों के पीछे से चमकी और फिर उन्हीं के पीछे छिप गई। कभी एक बार भी जो उसकी तरफ

देखा होता या किसी दूसरी ही लड़की की तरफ। पूरे घंटे-भर उसका जी करता ही रह गया कि एक बार भी वे अपनी बड़ी-बड़ी आंखें इधर फेरते, पर वे क्यों फेरने लगे ?

'···एक···दो और·· तीन।' रेखा सोचती जा रही थी, 'इस तरह तीन दिन गुजर गए और तीनों दिन विशाल का क्लास हुआ, पर तीन दिनों के अन्दर उन्होंने एक बार भी उसकी तरफ नहीं देखा। विशाल की ख्याति दिनोदिन बढ़ती जा रही थी। लड़के और लड़कियों की जीभ पर उनका नाम नाचने लगा था। पर चौथे दिन, हां चौथे ही दिन रेखा से नहीं रहा गया। उसने सौ बहाने ढूंढे उनसे बातें करने को और अन्त में एक उपाय सूझ ही गया।

'·· उस समय वे अपने विभाग में अकेले बैठे थे। जब वह वहां पहुंची, उसका कलेजा जोरों से धड़क रहा था। उसका सिर जैसे चक्कर खा रहा था। दरवाजे पर खड़ी हो गई तो विशाल ने एक उड़ती निगाह उसपर डाली और बोले—'आइए।' अन्दर गई और कांपते हाथों एक दरखास्त उनके सामने बढ़ा दिया, बिना कुछ बोले।'

"क्या है ?" विशाल ने पूछा था और बड़ी मुश्किल से वह कह पाई थी—

"रिकमेन्ड कर दीजिए।"

"आप किस इयर में पढ़ती हैं ?' दरख्वास्त लेते हुए विशाल ने कहा था और उसे लगा था वह उल्टे पैर भाग आए। चार रोज इनको मेरे क्लास में पढ़ाते हुए हो गए और आज तक कभी जैसे भूल से भी मेरा चेहरा नहीं देखा।

"तीसरे वर्ष में।" उसने किसी तरह अपने को संयत कर उत्तर दिया था।

"दर्शन-शास्त्र भी आपका विषय है क्या ?" यह दूसरी करारी चोट ''और रेखा ने मुश्किल से 'हां' कहा था।

'·· इसके बाद।' रेखा ने सोचा, 'हां इसके बाद फिर एक हफ्ते तक रेखा, विशाल के पास नहीं गई थी। और विशाल ने अब भी क्लास में एक बार भी उसकी तरफ नहीं देखा था। वह पूरे हफ्ते-भर हमेशा उन्हींके बारे में सोचती रही थी—कैसा आदमी है, एक बार भी आंखें उठाकर नहीं देखता जैसे इसके लिए औरत का कोई अस्तित्व ही नहीं ! दूसरे हफ्ते वह उनके यहां फिर एक बहाना बनाकर गई और फिर लगातार चार दिनों तक जाती रही। पांचवें दिन जब दरख्वास्त लेकर गई तो उन्होंने पूछा—"आप क्या रोज एक दरख्वास्त देती हैं ?"

उसे इस प्रश्न की उम्मीद नहीं थी क्योंकि लगातार चार रोज तक वे

चुपचाप दरख्वास्त, 'रिकमेन्ड' करके लौटा दिया करते थे। वह हड़बड़ा गई और बड़ी मुश्किल से बोली —

"जी, जी यह मेरी सहेली का है।"

"ओ अच्छा!" और उन्होंने दरख्वास्त पर एक दृष्टि डालकर कहा—"बड़ा अच्छा नाम है आपकी सहेली का···'रेखा'। आप ही की क्लास में है वह ?"

"···जी···मेरा मतलब है···इसके पहले वाले···दरख्वास्त मेरी सहेली···" और वह उनके हाथों से दरख्वास्त छीनकर भाग आई थी। वह जब भागी-भागी कॉमन-रूम मे लौटी तो उसके ललाट पर पसीने की बूंदें चमक आई थी और लगता था उसका कलेजा अन्दर से उछलकर बाहर आ जाएगा।

पर दूसरे दिन रेखा कॉलिज गई तो उसने विशाल में आकस्मिक परिवर्तन पाया। विशाल, जिसने आज तक क्लास में कभी लड़कियों की बेंचों की तरफ निगाह नहीं उठाई थी, उस दिन एक घंटे में दर्जनों बार रेखा की तरफ देख चुके थे। वीणा रह-रहकर चुटकी ले रही थी और रेखा को लग रहा था उसकी मुंह-मांगी मुराद पूरी हो गई थी। क्लास खत्म होते ही वह फिर एक दर-खास्त लेकर दर्शन विभाग में दौड़ गई थी। उस दिन कमरे में घुसते ही विशाल ने पूछा था—"तो आपका नाम रेखा है ?"

"जी।"

"अच्छा, आप रहती कहां हैं ?"

"रेलवे कोलोनी में।"

"आप इंटर में कहां थीं ?"

"देहरादून में।"

और इसके बाद उन्होंने दरख्वास्त रिकमेन्ड कर लौटा दिया था। पर रेखा जैसे ही कॉमन-रूम में लौटी विशाल का 'पियन' उसके पीछे-पीछे भागा आया। "अपनी दरख्वास्त दीजिए तो," आते ही वह बोला।

"क्यों ?"

"दीजिए न, विशाल जी मांग रहे हैं।"

दरख्वास्त को उसने बिना देखे ही दे दिया [illegible] तो उसने देखा रिकमेन्डेशन में [illegible] काटकर 'हर' बनाया गया था। [illegible] हवास खोने लगे हैं।' उसने [illegible] खुशी मिली थी, उतनी आज तक [illegible]

'''दूसरे दिन वह कॉलेज गई तो उसकी हुलिया ही बदली हुई थी। रेखा ने सोचा और उसके होंठों पर एक हंसी खेल गई। उस दिन वह गाढ़े गुलाबी रंग की साड़ी और उसी रंग का ब्लाउज़ पहने हुए थी। सिर के केश खूब करीने से काढ़कर उसने जूड़ा बनाया था और उसमें गुलाब का एक लाल फूल खोंस लिया था। उस दिन विशाल ने उसे देखा तो कुछ क्षण देखते ही रह गए। दोनों ने दोनों की बातें समझ लीं। रेखा ने सोचा और फिर, फिर तो दोनों तरफ आकर्षण बढ़ता ही चला गया। अब वह दिन में प्रायः दो बार, तीन बार दर्शन विभाग के सामने से गुजरने लगी। और, और रेखा ने सोचा और उसे हंसी आ गई। विशाल भी खूब थे, बिना गलती की गलती निकालकर उसकी कॉपी के पन्ने रंगने लगे और जितना रेखा का जवाब नहीं रहता था उससे ज्यादा उनके रिमार्क ही होने लगे।'''बड़े आए प्रोफेसर कहीं के, हूं! रेखा ने सोचा और तकिए के नीचे से चिट्ठी निकालकर फिर होंठों से लगा ली।

'''इस तरह पूरा एक साल गुजर गया। हां एक साल, रेखा ने सोचा और इस एक साल की अवधि में रेखा बहुत खुश रही। इसी बीच उसने विशाल का परिचय अपने पिताजी से कराया। उनको उसने कई बार अपने घर पर निमंत्रित किया। उनको अपने हाथ से बनाई मिठाइयां खिलाईं।

'''पर, पर रेखा ने सोचा—ऐसा आदमी नहीं देखा। हज़रत ने एक साल की इस अवधि में दुनिया-भर की बातें कीं, पर कभी एक बार भी जुबान खोलकर नहीं कहा कि—"मैं तुम्हें प्यार करता हूं।" एक बार चाय लेने के बहाने भी हाथ नहीं छुआ। उंगली नहीं दबाई। हूं, भला ऐसे भी कहीं प्यार किया जाता है, और रेखा ने होंठ बिचका दिए।

इसी समय सामने आइने पर उसकी दृष्टि पड़ी तो उसे हंसी आ गई और उसे याद आया एक बार उसने इसी तरह विशाल को मुंह चिढ़ाया था। वे कुछ नहीं करें, तो क्या वह भी उनके समान बुद्धू थी जो चुपचाप रहे। एक बार जब कॉलेज की छुट्टी हुई तो वह रिक्शे पर चढ़कर घर की ओर जा रही थी। धूप तेज़ थी और उसने अपना काला चश्मा आंखों पर चढ़ा लिया। पीछे मुड़कर देखा विशाल अपने विभाग से निकले आ रहे थे। उसे देखा तो देखते ही रह गए। बस क्या था, उनको ऐसे एकटक देखते देख उसने अपने होंठ बिचका दिए और वे अपना-सा मुंह लिए रह गए।

'''और कोई बुद्धू हो तो ऐसा, रेखा ने आगे सोचा। एक शाम को वे उसके यहां आए। पिताजी, वह और विशाल तीनों चाय पर बैठे। उसे एक बात सूझी।

बोली—

"सर !"

"कहो ।"

"आप कलकत्ते में मकान नहीं बनाइएगा ?"

"मकान का क्या होगा ?" उन्होंने जवाब दिया। बुद्धू कहीं के । कुछ तो अक्ल होती कि कोई अविवाहिता लड़की किसी अविवाहित व्यक्ति से मकान की बात क्यों पूछती है । 'मकान क्या होगा तो रहिए दार्जिलिंग के होटल में । खूब आनन्द आता होगा वहां पर ।'

'''और हां, ऐसा आदमी नहीं देखा । एक बार बड़े खुश हुए तो कॉलेज से उसका 'प्रोग्रेस रिपोर्ट' निकालते लाए ।

अभी सुबह ठीक से उठी भी नहीं थी कि पहुंचे—"लो यह अपना प्रोग्रेस रिपोर्ट ।" भला इसका भी कोई जवाब है ? प्रोग्रेस रिपोर्ट तो मेरे पास कॉलेज से आ ही जाता, न जाने इसमें कौन-से प्यार का प्रदर्शन निहित था ?

सोचते-सोचते रेखा को नींद आ गई । विशाल का पत्र एक हाथ में कलेजे पर दबाए, पता नहीं वह कितनी देर सोती रही कि माथे पर किसीका स्पर्श पा जग पड़ी । सामने वीणा खड़ी थी ।

"यह किसके पत्र के साथ प्यार हो रहा है री ?" वीणा ने टोका तो रेखा झेंप गई ।

"और किसका हो सकता है । उन्हींका है, मैंने तुमसे कहा था न कि आओ तो एक चीज़ दिखाऊं ।"

"देखूं," और वीणा ने रेखा के हाथ से पत्र ले लिया ।

"हां, यह तो विशाल का ही पत्र है ।" वीणा सुन्दर आश्चर्य में आकर बोली ।

"तुम्हें कैसे मालूम, यह तो रेणु ने कानपुर से भेजा है ?" रेखा ने मजाक में कहा ।

"मैं विशाल का हस्ताक्षर पहचानती हूं री, वह तो मेरे बक्से में दो साल से कैद पड़ा है ।" वीणा कह तो गई, पर कहते ही झेंप गई और फिर बात बदलकर कहा, "तुमने इसका जवाब दिया ?"

"नहीं तो !" रेखा ने भी हस्ताक्षर वाली बात को आगे न बढ़ाना ही मुनासिब समझा ।

एकता बसो

"तो आओ जवाब लिखें।" वीणा ने कहा।

"तुम्हीं लिख दो।" रेखा ने कहा।

"नहीं तुम।" वीणा ने दृढ़ता से कहा और रेखा को पत्र लिखाना आरम्भ किया—

आदरणीय विशाल जी,

आपका पत्र मिला। सचमुच आपने मेरे लिए जितना कुछ किया, उस योग्य मैं नहीं हूं। यह मेरा सौभाग्य है कि आपके सदृश शुभचिन्तक मुझे प्राप्त हुआ है। पर, कब तक रहेंगे आप दार्जिलिंग में ही। हम सब आपको देखने को व्यग्र हैं। अच्छा हो आप पत्र देखते ही आ जाएं—

आपकी ही
रेखा।

"इस पत्र को तुम्ही ले जाकर छोड़ दो।" रेखा ने वीणा को पत्र देते हुए कहा।

"ठीक है, पर मैं अभी चलूंगी। तुमने कहा था कि दोपहर में आना, इसीलिए चली आई।"

"कुछ तो रुको। सुबह भी आई तो चली गई।" रेखा ने जिद की।

"हां, पर अभी नही रुक सकती। घर पर एक मेहमान छोड़कर आई हूं। हां, सुनहरी चिट्ठी आज भी छुड़वा दूंगी।"

दस

वीणा जब रेखा के यहां से लौटी तो शरद बैठा ही हुआ था। उसे देखते ही बोला—

"बहुत शीघ्र आ गई दीदी!"

"तुम जो यहां बैठे थे। नहीं आती तो वही पहुंच जाते। रेखा से कह दिया, मेरे एक मेहमान आए हैं।"

"काफी दिनों से तो मैं उधर गया ही नहीं दीदी, पर यह तुम्हारे हाथ में क्या है?" और शरद ने वीणा के हाथ से लिफाफा छीन लिया।

"अरे मैं तो भूल ही गई। इसे रास्ते में ही छोड़ना था। तुम्हारी चिन्ता मे चिट्ठी की चिन्ता जाती रही।" वीणा ने इसके बाद नौकर को आवाज़ दी, और उसे चिट्ठी छोड़ने को दे दी। "विशाल को जानी है।" वीणा के मुंह से निकला और उसने दातों तले उंगली दबा ली।

"तो दीदी अब तुम···?" शरद ने एक हल्की मुस्कान के साथ कहा।

"शरद, तुम्हारा मतलब ?" वीणा कुछ समझी नहीं।

"मतलब क्या दीदी ! पर चलो अच्छा ही हुआ, अब देखें ऊंट किस करवट बैठता है।" शरद एक विचित्र मुद्रा में मुस्कराते हुए बोल रहा था।

"शरद तुम क्या बक रहे हो ?" वीणा की आवाज कुछ तेज थी।

"बकना-वकना क्या दीदी, दिल तो सबका होता है और यह कब क्या रंग लाए, यह तो यही जाने। खैर, चलो इस बार जोड़ी अच्छी बैठी है।"

"शरद, तुम मुझे दीदी भी कहते हो और मुझे परेशान भी करते हो। तुम्हें शरम नहीं आती।"

"शरम तो मुझसे ही शरमाती है, वह मेरे पास क्या आएगी दीदी, पर, हां, अपनी किस्मत के आकाश से अब बादल छंटते नजर आते हैं।" शरद की तीखी मुस्कान वीणा का कलेजा छेद रही थी।

"शरद, तुम्हारा दिमाग तो ठीक से काम कर रहा है ?" वीणा की आवाज एकाएक बहुत तेज़ हो गई।

"दीदी, वह मेरे पास है ही कहां जो उसके ठीक या गलत काम करने की बात उठे। पर मेरी समझ में एक बात आ रही है। तुम तो जानती हो कि मैं एन० सी० सी० में भी रहा हूं।"

"रहे होगे, पर तुम्हारे समान लोग जहां रहेंगे वहीं गंदगी फैलाएंगे।" वीणा ने खीझकर कहा।

"यह तो तुमने मेरे मुंह की बात छीन ली दीदी, पर मेरे कहने का अर्थ था कि वहीं मैंने सीखा था कि 'ज्वायंट-फ्रन्ट' का बड़ा महत्त्व होता है।"

"शरद !!!" वीणा कड़की, "तुम नीच हो, मैं तुम्हारा चेहरा भी नहीं देखना चाहती। तुम निकल जाओ मेरे घर से। मैं कहती हूं यह चिट्ठी मैंने नहीं रेखा ने विशाल को लिखी है। तुम मुझे गलत समझ रहे हो।"

"सही तो मैंने आज तक सिवा अपने किसी और को समझा नहीं। पर हां, एक बात कहे जाता हूं दीदी, अगर तुम मेरे और रेखा के रास्ते से अलग नहीं हुई तो मैं क्या, तुम देखोगी एक दिन सारी दुनिया तुम्हें गलत समझेगी।"

शरद अपनी कुर्सी से उठते हुए बोला।

"शरद तुम हद दर्जे के नीच हो।" वीणा ते जी मे बोलती हुई उठ खड़ी हुई।

"नहीं दीदी, मेरी नीचता के बारे में अभी अपना अन्तिम अन्दाज़ नहीं लगाओ। शायद भविष्य में उसमें कुछ और सुधार की आवश्यकता पड़े।" और इतना कहकर शरद दरवाज़े से बाहर आ गया।

शरद के जाने के बाद वीणा अपने सोने के कमरे में चली गई। क्रोध के मारे उसका चेहरा लाल हो गया था। आंखें चढ़ गई थीं और उसकी सांसें तेजी से चल रही थीं। सामने शीशे में उसने अपना चेहरा देखा तो उसे लगा आज तक इस रूप में उसने अपने को कभी नहीं देखा था।

वीणा के घर से निकलकर शरद रेखा के यहां पहुंचा। रेखा अभी खाना खाकर लौटी ही थी और अपने पलंग पर फैलकर विशाल की उस छोटी चिट्ठी को पढ़ रही थी। चिट्ठी को एक बार पढ़कर उसने उसे खोलकर अपने पलंग पर फैला दिया और फिर औंधी होकर उसीपर सो गई। इसी समय 'काल-बेल' बजी। वह हड़बड़ाकर उठी और दरवाजा खोल दिया। देखा तो शरद दरवाज़े पर खड़ा था। शरद को देखकर एकाएक घबरा-सी गई और भीतर घुसकर उसने तेजी से दरवाजा बन्द कर लिया।

"रेखा डियर।" शरद ने धीरे से आवाज दी।

"मैं कहती हूं मि० शरद आप जैसे आए हैं वैसे ही चले जाइए। मैं ऐसी बातें सुनना नहीं चाहती हूं।" रेखा कमरे के अन्दर से ऊंचे स्वर में बोली।

शरद थोड़ी देर तक चुप रहा फिर बोला—"ठीक है, मैं चला जाता हूं, पर इसमें तुम्हारा ही नुकसान है।"

"मेरा नुकसान हो या लाभ, पर आप मेहरबानी कर चले जाइए।" रेखा ने कुछ तेज़ी से कहा।

"पर, मुझे वीणा ने भेजा है।" शरद ने जवाब दिया।

"हो नहीं सकता। वीणा आपको मेरे पास किसी हालत में नहीं भेज सकती।"

"पर, तुम्हें विश्वास नहीं हो तो मैं क्या करूं। वीणा के एक मेहमान आए थे। उनके साथ अभी—दो रोज के लिए वह कलकत्ते से बाहर चली गई। तुमने उसे जो एक चिट्ठी छोड़ने के लिए दी थी वह गलती से अपनी एक सहेली के यहां भूल आई है। उसने कहा है कि तुम उसे जाकर ले लो।"

"यह क्या किया वीणा ने ? किसके यहां छोड़ दी उसने चिट्ठी ?" रेखा ने यह कहते हुए हड़बड़ाकर दरवाजा खोल दिया।

"रेखा डियर ! सभी पर आंखें मूंदकर विश्वास कर लेने का परिणाम यही होता है। खैर, छोड़ो इन बातों को। मुझे एक गिलास पानी पिलाओ।" शरद अब तक अन्दर आकर कुर्सी पर बैठ गया था। रेखा लाचार होकर पानी का गिलास लाने अन्दर चली गई।

"हां, तो मि० शरद, मैं आज आपसे बातें करने के मूड में नहीं हूं ? आप कृपया शीघ्र बतलाइए कि वीणा ने वह चिट्ठी कहां छोड़ी है !" रेखा ने पानी का गिलास लाकर मेज पर रखते हुए कहा।

"रेखा, तुम तो यह समझ ही रही हो कि अब मैं अपनी मर्जी से ही यहां से उठूंगा, क्योंकि जब तक मैं तुम्हें चिट्ठी का पता नहीं बताऊंगा तब तक तुम भी मेरा जाना पसन्द नहीं करोगी और जब मैं आ गया हूं तो अपनी बात भी कहकर ही जाऊंगा।" शरद ने गिलास का आधा पानी पीकर आधे खाली गिलास को टेबुल पर रखते हुए कहा।

"बताइए, क्या कहना है आपको ?" रेखा खीझकर एक कुर्सी पर बैठ गई।

"सबसे पहले तो मुझे यह कहना है कि तुमने गिरगिट देखा है ?"

"क्या मतलब ?" रेखा खीझकर बोली।

"मतलब यह कि गिरगिट रंग बदलता है।"

"बदलता होगा।"

"बदलता होगा सो नहीं, मेरा मतलब है तुम भी गिरगिट से कुछ कम नहीं।"

"देखिए शरद बाबू, व्यर्थ के बकवास के लिए मेरे पास समय नहीं। आप जल्दी से काम की बात कहिए।" रेखा कुर्सी पर छटपटा रही थी। उसके चेहरे पर बेचैनी के भाव स्पष्ट थे।

"बेकाम की बात करने की तो मेरी आदत नहीं रेखा। रही समय की बात तो मेरे लिए बहुत लोगों को समय निकालना पड़ता है। यह बात दूसरी है कि तुम औरों से ज्यादा खूबसूरत हो और मुझे तुमसे जिन्दगी में पहली बार प्यार भी हो गया है। तो मुझे पूछना यह था कि अभी उस रोज तक तो तुम मेरे प्यार की दुहाई दे रही थी और आज यह क्या बात है कि मैं तुम्हें फूटी आंखों भी नहीं सुहा रहा ?"

"यह मेरी मर्जी है मिस्टर शरद। और आप यह भी स्पष्ट सुन लीजिए

कि आज के बाद मैं फिर आपसे कभी भी मिलने की इच्छा नहीं रखती हूं।"

"मिलना और न मिलना तो तुम्हारी इच्छा पर नही मेरी इच्छा पर है। खैर, मैं यह पूछ रहा था कि क्या विशाल का भूत फिर सवार हो गया?"

"विशाल का भूत सवार हुआ हो या किसी और का, आपको मेरे व्यक्तिगत मामले में हस्तक्षेप करने का कोई अधिकार नही।" रेखा की दृष्टि बार-बार घड़ी पर जा रही थी।

"यह तुम्हारे व्यक्तिगत मामले में हस्तक्षेप नही मेरे व्यक्तिगत मामले में हस्तक्षेप की बात है।" शरद ने बहुत गम्भीरता से कहा।

"कैसे?" रेखा अपनी कुर्सी पर तनकर बैठ गई।

"यह ऐसे कि मैं तुम्हें प्यार करता हूं और ऐसी स्थिति में तुम्हें किसी दूसरे व्यक्ति से प्यार करने का कोई अधिकार नही।"

"बड़े आए प्यार करने वाले। मुझे आपके प्यार से कोई मतलब नही।" रेखा ने दृढ़ता से कहा।

"अब तुम्हारे मतलब होने या न होने से क्या होता है? यह कोई बात हुई कि आज तुम मुझे प्यार के जाल में बांधोगी, कल दूसरे को और परसों तीसरे को। मैं तुमसे प्यार करता हूं और तुमने भी मुझे प्यार का वचन दिया है। तुम्हे मुझसे मतलब हो या नही पर मुझे तो तुमसे मतलब है ही। अच्छा पहले यह बतलाओ कि वह चिट्ठी कहां जाने को है जिसके लिए तुम इतना व्यग्र हो?"

"यह जानने के पहले आप कृपया यह बता दीजिए कि वह चिट्ठी है कहां?"

"नही, पहले तुम बताओ।"

"तो लीजिए, वह चिट्ठी विशाल को लिखी गई है।" रेखा ने गम्भीर होकर कहा।

"यह तो खैर, मैं तुम्हारे बिना कहे ही समझता हूं और सच पूछो तो मैं यह भी जानता हूं कि वह चिट्ठी तुमने नहीं वीणा ने लिखी है।" शरद कुछ गम्भीर होकर बोला।

"आप कुछ नही जानते। वह चिट्ठी मैंने लिखी है।" रेखा का स्वर कठोर था।

"हो सकता है मैं कुछ नही जानता। पर मैं इतना तो अवश्य जानता हूं कि विशाल को बुलाने की जितनी उत्सुकता आपको है उससे कम वीणा को नही है।" यह कहकर शरद एक अर्थ-भरे रूप में मुस्करा दिया।

"मिस्टर शरद!" रेखा को लगा कोई तेज तीर उसके दिल के आर-पार

हो गया है।

"चौंकिए नहीं मिस रेखा। दिल तो सबका होता है और फिर वीणा तो आपसे सब तरह से बेहतर है। विशाल को प्यार ही करना होगा तो वह वीणा से ही क्यों नहीं करेंगे ? और सच पूछो तो विशाल को वीणा से बहुत पहले से प्यार है।"

"मिस्टर शरद।" रेखा ने शरद को बीच ही में टोककर कहा, "यह आपकी कोई नई चाल है। मैं विशाल को जानती हूं। वे देवता हैं।"

"विशाल देवता हैं तो वीणा देवी है रेखा। और एक देवता देवी से ही प्यार क्यों नहीं करेगा। क्यों वह तुम्हारे समान पतिता को उठाने के लिए नीचे गिरेगा ?" शरद ने कहा और फिर उसके होंठों पर एक तिरछी मुस्कराहट खेल गई।

"मिस्टर शरद ! आपको मुझे गाली देने का कोई अधिकार नहीं।" रेखा का चेहरा लाल हो गया था और उसकी आंखें छलछला आई थीं।

"यदि आपको हमसे प्यार जताकर मुझे ठुकराने का अधिकार है तो मुझे आपको गाली देने का भी अधिकार है। लीजिए मैं चला। पर इतना जान लीजिए कि न तो वीणा कहीं बाहर गई है और न वह आपकी चिट्ठी ही भूली है। वह तो मेरा आपसे मिलने का बहाना मात्र था।" यह कहकर शरद उठ खड़ा हुआ।

"शरद तुम नीच हो। पतित हो। झूठे हो।" रेखा दांत पीसते हुए उठ खड़ी हुई।

"मैं सब कुछ हूं रेखा, पर यह सब तुम्हारे प्यार के चलते हूं।" शरद गम्भीर होकर कह रहा था। एक प्यार करने वाले दिल की मजबूरी तुम नहीं जानती हो। दूसरी बात यह है कि तुम अपनी भलाई के लिए ही आज की घटना का उल्लेख वीणा से नहीं करोगी। नहीं तो मैं तुम्हारा पूरा इतिहास विशाल के सामने रख दूंगा। और अन्तिम बात यह रेखा डियर की धरती पर रहकर आकाश के फूल की इच्छा नहीं करते। जो जिसके लिए बना है वह उसीको मिलेगा। वीणा के लिए विशाल है और रेखा के लिए शरद। यह एक भीषण सत्य है जिसे तुम्हें आज नहीं तो कल मानना ही पड़ेगा।" इतना कहकर शरद तेज़ी से रेखा के घर से बाहर निकल गया।

शरद के जाने के बाद रेखा कोई दो मिनटों तक अपनी जगह पर खड़ी रही। विभिन्न भावनाओं के आकस्मिक उद्रेक से उसका मस्तिष्क कुछ देर तक जैसे

असंतुलित-सा हो गया। वह एक ही साथ क्रोध, ईर्ष्या और प्यार की बाढ़ में बह-सी गई थी और कुछ देर के लिए उसे अपनी स्थिति का कुछ भी ज्ञान नहीं रहा था। उसके बाद दौड़ी-दौड़ी वह अपने पलंग के पास गई जिसपर विशाल की चिट्ठी अब भी खुली पड़ी थी। चिट्ठी को देखते ही वह अपने को रोक न सकी और पलंग पर गिरकर फफक-फफककर रो पड़ी। विशाल की चिट्ठी उसके चेहरे के नीचे आ गई थी और वह रेखा की आखों में लगातार बह रहे आंसुओं से नहाती जा रही थी। सिसकियों के बीच रेखा बोलती जा रही थी—"विशाल ! मेरे अच्छे विशाल ! मुझे बचा लो। मुझे तुमपर विश्वास है, तुम मेरे सिवा किसी दूसरे के नहीं हो सकते। मुझे शरद के लिए नहीं छोड़ो विशाल, मेरी गलतियों को माफ करो। मैंने अपने को सुधार लिया है। मैं पतिता नहीं हूं। मेरी आत्मा शुद्ध है विशाल ! मैं तुम्हारी हूं केवल तुम्हारी। मैं अब शरद के धोखे में नहीं आ सकती। मुझे केवल तुमसे प्यार है विशाल ! केवल तुमसे ! मुझे बचा लो विशाल, मुझे बचा लो। मैं नीच नहीं हूं विशाल, मैं पतिता नहीं हूं। मेरे देवता, मुझे बचा लो···।" और रेखा देर तक इसी तरह सिसकियां भरती रोती रही।

ग्यारह

और विशाल का कहीं पता न चला। सुधीर आज दिन के तीन बजे से ही विशाल को खोज रहा था। दिन में कोई डेढ़ बजे खाना खाने के बाद वह सो गया था। इसके बाद उठकर विशाल के कमरे में गया तो वह वहां नहीं था। घंटे पर घंटे बीतते गए और विशाल का पता नहीं चला। इस तरह इसके पहले तो वह कभी गायब नहीं हुआ था। सुधीर के बिना तो एक क्षण भी वह रह नहीं पाता। सुधीर की चिन्ता बढ़ती जा रही थी। अन्त में शाम के पांच बजे वह अपने होटल से निकल गया अगल-बगल की पहाड़ियों की तरफ, जिधर वे कई बार घूमने गए थे। सुधीर ने आवाज दी—

"विशाल ! विशाल !!"

"विशाल ! विशाल !!" और पहाड़ियों ने प्रतिध्वनि के रूप में उसकी

आवाज़ उसीको वापस कर दी। चारों ओर ढूंढकर सुधीर रात के आठ बजे होटल लौटा पर विशाल का अब भी पता नहीं था। सुधीर की चिन्ता और बढ़ गई। विशाल की बुद्धि पर उसे कोई भरोसा नहीं था। वह जानता था कि उसने दर्शनशास्त्र के सिद्धांतों का चाहे जो मनन कर लिया हो और बड़ी-बड़ी पाण्डित्यपूर्ण बातें वह चाहे जितनी भी कर ले, पर जहां प्यार का प्रश्न आता था, उसका सारा ज्ञान समाप्त हो जाता था। कब कौन-सी बात अथवा कौन-सी भावना उसके अन्दर किस प्रतिक्रिया का सृजन करेगी वह नहीं जानता था। सुधीर को खूब याद था कि उधर के दिनों में जब शरद का जादू रेखा पर चल गया था, एक शाम को जब रेखा ने घर के अन्दर रहकर भी अपनी छोटी बहन से कहलवा दिया था कि वह अन्दर नहीं है तो विशाल पर क्या बीती थी। विशाल उस दिन सुधीर के पास आकर बच्चों की तरह रोने लगा था और बोला था—"सुधीर, मेरी सारी बुद्धि व्यर्थ है, मैंने अपने अमूल्य प्यार के खज़ाने को ऐसे व्यक्ति पर न्योछावर कर दिया है जिसके अन्दर दिल ही नहीं है। वह पत्थर है सुधीर, वह कृतघ्न है। उसने घर पर रहकर भी कहलवा दिया है कि वह नहीं है।" सुधीर को उसकी बातों पर विश्वास नहीं हुआ था, क्योंकि वह सोच नहीं सकता था कि रेखा, जिसके लिए विशाल ने इतना कुछ किया है, वह अपने घर पर विशाल के साथ ऐसा व्यवहार करेगी। पर विशाल ने आंसुओं के बीच कहा था—"मैंने अपने कानों से सुना है सुधीर, उसकी आवाज को तो मैं हज़ार व्यक्तियों की आवाज़ों में भी अलग से पहचान सकता हूं। वह अपनी छोटी बहन से कह रही थी—'तुमि बोल दे, जे दीदी बाड़ी नेई।'" और इसके बाद विशाल ने न तो उस शाम खाना ही खाया था और न वह रात-भर सो ही सका था।

इन सब बातों को सोचकर सुधीर का मन घबड़ा गया और उसने विशाल के पूरे कमरे को छान डाला। उसके सभी सामान दुरुस्त थे। कोई चिट्ठी या ऐसा कोई कागज़ भी नहीं दिखाई पड़ा जिसके आधार पर उसके गायब होने का कोई अन्दाज़ लगाया जा सकता। केवल एक पैंट और एक कमीज़ जिसे आज वह पहने हुए था, यहां नहीं थी। सुधीर को यह तो विश्वास हो गया कि विशाल दार्जिलिंग से बाहर कहीं नहीं गया है, पर आखिर वह अब तक है कहां? हो सकता है किसी झरने के किनारे अथवा किसी पहाड़ी की चोटी पर वह रेखा के ध्यान में डूबा हो और उस तक सुधीर की आवाज़ नहीं पहुंची हो। यह सोचकर सुधीर ने फिर एक बार बाहर जाकर खोजने की बात सोची पर दरवाज़ा

खोलते ही उसने देखा कि बाहर एक-ब-एक बादल घिर आए हैं और थोड़ी-थोड़ी बूंदा-बांदी हो रही है। सुधीर ने सोचा अब जाना बेकार है क्योंकि विशाल अगर बाहर कहीं होगा तो इस पानी में अवश्य ही लौट आएगा। वह फिर कमरे के अन्दर लौट आया और अपनी चारपाई पर लेटकर सवेरे की डाक से आए अखबारों मे अपना ध्यान लगाने का प्रयत्न करने लगा। पर उसका मन अखबारों में लगता ही नहीं था और ध्यान रह-रहकर टेबुल पर रखी टाइम-पीस पर चला जाता था जिसमे अब रात के दस बज रहे थे। बाहर बूंदा-बांदी तेज हो गई थी और सुधीर का मन अब बहुत ज्यादा व्यग्र हो गया था।

"दस बज गए ?" विशाल ने कहा।

"हां बाबू दस बज गए, पर इसमें अपना क्या अधिकार है, आज तक तो ऐसा नहीं हुआ।"

"पर मैं अब कब तक प्रतीक्षा करूं ? तीन बजे से यहां बैठे-बैठे तो मेरी हालत खराब हो गई। मुझे पता भी नहीं था कि इतनी देर तक यहां ठहरना पड़ेगा वरना मैं कपड़े बदलकर आता। अब तो ठंड के मारे मेरा बुरा हाल है।"

"तो जाइए न बाबू, आपके यहां रहने से तो कोई अन्तर नहीं पड़ेगा।"

"नहीं, जब अब तक ठहर गया तो अब अन्त मे ही जाऊंगा।" और विशाल कुर्सी के ऊपर दोनों घुटने चढ़ाकर उकड़ू बैठ गया। ठंड बढ़ती जा रही थी और उसका सारा शरीर कांप रहा था।

"मेरे पास तो यहां कुछ है भी नहीं जो आपको ओढ़ने के लिए दू। मेरे ख्याल से आप चले जाइए, नहीं तो आप बीमार हो जाइएगा।"

विशाल यहां रेखा की चिट्ठी की आशा मे आया था। साढ़े तीन बजे की डाक वह देख चुका था। छः बजे की डाक अन्तिम थी और उसीकी प्रतीक्षा वह कर रहा था। डाकखाने के सभी कर्मचारी लौट गए थे और केवल एक बूढ़ा किरानी वहां रह गया था जिसे शाम की डाक छांटनी थी। विशाल डाकखाने की एक लकड़ी की कुर्सी पर तीन बजे से ही बैठा हुआ था। छः बजे के बाद तो वह अपनी कुर्सी से हिला भी नहीं था, अतः इधर भूख और प्यास से उसका बुरा हाल था और उधर ठंड के चलते वह कांपे जा रहा था।

"देखिए तो कौन है ?" किसीका पदचाप सुन विशाल कांपते हुए बोला।

"कोई होगा बाबू। यहां तो कितने आते-जाते रहते हैं। डाकखाने के आने

में तो पहले डाक के झोले की टन-टन की आवाज होती है।" डाकखाने के किरानी ने कहा और पॉकेट से एक सस्ता-सा सिगरेट निकालकर सुलगाने लगा।

"दार्जिलिंग भी खूब है बाबू! कभी-कभी तो इस तरह ठंडी हो जाती है कि इसकी नब्ज का भी पता नहीं चलता। आज देखिए न दिन कितना गर्म था! जरा-सी बूंदा-बांदी हुई और ठंड पड़ने लगी। मैं तो बूढ़ा हुआ, जरा-सी ठंडक भी नहीं बर्दाश्त होती। सिगरेट पीने से कुछ गर्मी आती है। लीजिए न एक आप भी।" और उस बूढ़े किरानी ने खांसते हुए विशाल की तरफ एक सिगरेट बढ़ा दी।

"धन्यवाद! मैं पीता नहीं हूं।" विशाल ने हाथ जोड़ दिए।

"नहीं पीते बाबू तो अच्छा ही करते हैं। मेरे ख्याल से पीना सब कुछ अच्छा है सिवा गम के। और जो दूसरी चीजें पीना सीख लेता है वह गम पीना भूल जाता है, इसीलिए तो बाबू मैंने सिगरेट पीना आरम्भ किया।" बूढ़ा किरानी रह-रहकर सिगरेट के कश खींचता जा रहा था और सिगरेट के तम्बाकू से काले और पीले पड़े उसके दांत जब-तब बाहर झांक पड़ते थे।"

"तो आपको भी गम है?" विशाल ने अनायास टोक दिया।

"है नहीं बाबू, हुआ था। गम तो हुआ और चला भी गया। पर सिगरेट की लत जो पड़ी वह अब तक बनी हुई है।"

"तो कैसा गम था आपको?" विशाल ने कांपते हुए कहा।

"छोड़िए बाबू, ये जवानी की बातें हैं, अब तो कहते भी शर्म आती है। दरअसल बात यह है कि एक लड़की थी, नाम था उसका रूपा। मेरे ही मुहल्ले में रहती थी। बहुत ही शोख और चंचल थी वह। हम दोनों के बीच मुहब्बत हो गई, पर वह बेवफा निकली और एक सेना वाले के साथ भाग गई। सच कहिए बाबू तो लड़की जाति ही बेवफा होती है। आपको भी लगता है किसी लड़की-ओढ़की का ही चक्कर है।"

"क्यों?" विशाल ने टोका।

"यह तो साफ ही है। सिवा मुहब्बत के और किसमें ताकत है बाबू कि इन्सान का खाना-पीना हराम करा उसे शैतान बनने पर मजबूर करे! खैर, अब डाक आ गई। देखें आपकी रूपा का क्या हाल है।"

"रूपा नहीं, रेखा।" विशाल के मुंह से अनायास निकल गया, पर, अब तो बात बाहर आ ही गई थी।

उसी समय डाकिया कमरे में हाजिर हुआ।

बूढ़े किरानी ने डाक का झोला काटकर उलट दिया। अन्तिम डाक में कोई खास चिट्ठियां नहीं थीं। विशाल ने अपने ही हाथों सबको उलट डाला, पर कोई चिट्ठी नहीं मिली। विशाल चलने को हुआ तो बूढ़े किरानी ने कहा—"यह न बाबू, यह 'रकार' ही बहुत अशुभ है—रेखा, रीता, रूपा, रमा इन नामों की सभी लड़कियां बेवफा होती हैं। अपने तो केश सफेद हो गए। अब तक नामों पत्र भेजे भिजवाए पर, ये 'र' वाली! ना बाबा ना, इनका कोई भरोसा नहीं।" और बूढ़ा किरानी अपने काले-पीले दांतों को निकालकर हंस पड़ा।

"पागल है।" विशाल ने धीरे से कहा और डाकखाने के बाहर आ गया। पानी कुछ कम हो गया था। पर ठंडक काफी बढ़ गई थी। वह तेजी से अपने होटल की ओर चल पड़ा।

विशाल होटल के कमरे में घुसा, तो देखा सुधीर उसके बिस्तर पर लेटा हुआ है। सुबह का अखबार उसके मुंह पर ढंका पड़ा था और लगता था वह अखबार पढ़ते-पढ़ते ही सो गया है। विशाल की आहट मिलते ही सुधीर की नींद टूट गई और वह हड़बड़ाकर उठ बैठा। विशाल की हालत देखने योग्य थी। उसके कपड़े भीगकर उसके शरीर से चिपक गए थे और वह जाड़े से कांप रहा था। आंखें खुलते ही सुधीर चिल्ला पड़ा—"अरे तुम?"

"तो तुम क्या समझते हो मेरा भूत आया है?" विशाल ने कांपते हुए कहा और फिर कपड़े बदलने लगा।

"समझता क्या था, अभी भी समझता हूं?" और सुधीर, सामने की घड़ी पर दृष्टि डालकर बोला, "रात के बारह बजे आदमी का भूत नहीं तो क्या आदमी लौटता है?"

"तो तुमने समझा, मैं दार्जिलिंग की पहाड़ियों में आत्महत्या कर गया?" विशाल अपने भीगे कपड़े खोलकर सफेद पायजामा और कुर्ता पहन चुका था और एक ऊनी चादर लपेटकर वह सुधीर की बगल में चारपाई पर बैठ गया।

"तो हजरत अब तक थे कहां? क्या किसी नई मुहब्बत का भूत सवार हो गया?" सुधीर ने मुस्कराते हुए कहा।

"पहले अपनी बात वापस लो। इसके बाद जवाब दूंगा।" विशाल ने मुस्कराते हुए कहा।

"क्या मतलब?"

"मतलब यही कि अपनी बात वापस लो।"

"ली भाई, ली, अपनी बात वापस। यह तो मैं जानता हूं कि हुजूर के सामने सिवा रेखा के किसी दूसरी लड़की की बात चलाना भी पाप है। अच्छा अब बताइए अब तक आप कहां थे?"

"डाकखाने में था।" विशाल ने गम्भीरता से कहा।

"रात के बारह बजे डाकखाने में?" सुधीर को आश्चर्य हुआ।

"डाक गाड़ी लेट थी।"

"पर आखिर तुम्हें आज डाकखाने में डेरा डालने की जरूरत ही कैसे पड़ गई?"

"आज रेखा की चिट्ठी आने वाली थी।"

"यह तुम्हें कैसे मालूम?"

"क्योंकि मैंने उसे चिट्ठी भेजी थी और उसका जवाब तो आना ही था।"

"पर इतने दिनों से तो तुम डाकखाने गए नहीं। आज ही क्या बात हुई?"

"बात यह हुई कि मैंने रात को सपना देखा कि रेखा ने मुझे चिट्ठी लिखी है।"

"ओ, तो बात यह है कि हुजूर का पागलपन अनेक आयाम रखता है। इन अन्धविश्वासों के चक्कर में तुम कब से पड़ गए?"

"देखो सुधीर, मैं किसी वहम में नहीं पड़ना चाहता। पर तुम्हें यह जानना चाहिए कि इस संसार में जिन बहुत-सी चीजों को हम अन्धविश्वास और आकस्मिक कहकर उड़ा देते हैं उनके पीछे अक्सर सत्य की उपस्थिति होती है। मैं अन्धविश्वासी नहीं हूं, पर साथ ही मैं आधुनिक, अधकचरे विज्ञान का अन्धा उपासक भी नहीं जिसमें हर असमान्य घटना को अवैज्ञानिक करार कर उसके महत्त्व को समाप्त कर दिया जाता है। अब यही बात लो, भूत और प्रेत के अस्तित्व को आज के युग में बहुत लोग नहीं मानते, पर, आए दिन ऐसी घटनाएं घट जाती हैं जिनके चलते उनके अस्तित्व में विश्वास करने को हमें बाध्य होना पड़ता है। बन्द कमरों में कंकड़-पत्थरों की वर्षा, वस्तुओं का देखते देखते गायब हो जाना, प्रेत-सिद्ध व्यक्तियों द्वारा तुम्हारे भूत-वर्तमान की सारी घटनाओं को सच-सच बता देना, ये सारी बातें यह सिद्ध करती हैं कि प्रेत या भूत भी कोई चीज़ है। इस तरह हम में से बहुत पुनर्जन्म में भी विश्वास नहीं करते, पर आए दिन ऐसी घटनाएं आंखों के सामने घटी हैं जिनसे पुनर्जन्म में भी विश्वास करना पड़ता है। तुमने ऐसी बहुत-सी बातें विश्वस्त-सूत्रों से जानी होंगी जिसमें कोई चार-पांच साल का लड़का अपने पहले जन्म का पूरा हुलिया,

बाप-मां का नाम, गांव का अता-पता बता देता है और यही बच्चा उसके पहले वाले गाव मे ले जाकर छोड़ देने पर वह अपना पहला घर और पहले के माता-पिता को भी पहचान लेता है। ऐसी घटनाओं से जिनका सामना नही हुआ, वे तो पुनर्जन्म और भूत-प्रेत मे विश्वास करने वाले को अन्धविश्वासी ही कहेंगे। मेरा मतलब है कि सुधीर कि हम अपनी आधुनिकता और वैज्ञानिकता की बाढ मे इस तरह बह नहीं जाएं कि अति प्रत्यक्ष वास्तविकता की ओर से भी अपनी आखें मूद लें। ज्ञानी बनना अच्छा है सुधीर पर ज्ञान अगर यथार्थ और वास्तविकता की छाती पर सवार हो जाए तो वह कहा तक मान्य होगा ?"

"तो तुम भूत-प्रेत मे भी विश्वास करते हो ?" सुधीर कुछ आश्चर्य और कुछ कौतूहल से विशाल की तरफ देख रहा था।

"विश्वास करता क्या हूं ? विश्वास करना पडता है। तुमको विश्वास हो चाहे न हो पर सुना तो तुमने भी होगा कि हमारी आत्मा अमर है। आत्मा की यह अमरता ही प्रेत-योनि के अस्तित्व का कारण है। मुझे अपने धर्म-ग्रन्थों की इस उक्ति मे कि अशान्त आत्माएं प्रेत बन जाती हैं पूरा विश्वास है। मैं इसके पीछे कोई वैज्ञानिक कारण नही ढूढ़ता और न मैं इसे आवश्यक ही समझता हूं।"

"विशाल, आत्मा की अमरता की तुम्हारी बात मुझे एक व्यक्ति की याद दिलाती है जो मृत व्यक्तियों की आत्माओं को बुलाता था।" सुधीर ने विशाल को बीच ही मे टोककर कहा, "क्या तुम इसमे भी विश्वास करते हो ?"

"उसके बारे मे मैं बहुत नही जानता। पर मुझे इस सम्बन्ध मे एक घटना याद आ रही है। मेरे एक परिचित है जिन्हें हम चाचा कहकर बुलाते है। वे एक बार जोरों से बीमार पडे। उन्हीके घर मे एक व्यक्ति हैं जो मृत आत्माओं को बुलाते हैं। रोगी की हालत नाजुक हो गई थी और यह बात ठहरी कि रोगी के पिता की मृत आत्मा को बुलाकर यह जाना जाए कि रोगी का क्या होगा। जो व्यक्ति मृत व्यक्तियों की आत्माओं को बुलाते थे उन्होने समाधि लगाई। सुना है आत्माओं को बुलाने के लिए बहुत एकाग्रता की आवश्यकता होती है। कमरे मे हम तीन-चार व्यक्ति बैठे हुए थे। रोगी का पलंग बीच मे था। थोड़ी ही देर मे ऐसा हुआ कि कमरे के अन्दर जोरो से पत्थरों की वर्षा होने लगी। पर, एक पत्थर भी किसीको लगा नही। सभी रोगी की शय्या के इर्द-गिर्द ही गिरे। जो व्यक्ति आत्मा का आह्वान कर रहे थे वे बोले कि किसी कारण आत्मा क्रोधित हो गई है और यह इस बात का भी संकेत हो सकता है कि रोगी की जान नही बचेगी। वह घटना चाहे जिस बात का संकेत हो, पर वह रोगी हम लोगों की

उपस्थिति में आधे घंटे के अन्दर ही मर गया ।"

"विशाल, तुम्हारे सोने मे तो बहुत विलम्ब हो गया, पर तुम्हारी इन बातों से मेरी उत्सुकता बढ गई है। कहो तो एक प्रश्न और पूछ् ?" सुधीर बोला।

"शौक से पूछो। मैं तो आज यों भी नहीं सो सकता था। सात घंटे तक पोस्ट ऑफिस में रेखा के पत्र की प्रतीक्षा के बाद मेरी मानसिक स्थिति ऐसी हो गई है कि मुझे आज नींद आने से रही। यह तो अच्छा हुआ तुमने बातें निकाल दी वरना आज मैं पूरी रात उसीके ध्यान में बिता देता। हां तो पूछो।"

"विशाल, क्या सभी मृत व्यक्तियों की आत्माएं बुलाई जा सकती है ?"

"मुझे तुम प्रेत-विद्या का विशारद ही नही समझ लो। पर मैंने इतना सुना है कि जिन आत्माओं का पुनर्जन्म नही होता वे ही आ सकती है और यह बात ठीक भी जंचती है। तुम आत्मा बुलाने की ही बात कहते हो तो मुझे एक बूढे डॉक्टर की कहानी याद आ रही है। इस घटना को मैंने कलकत्ते के एक प्रसिद्ध अखबार में सच्ची कहानी के रूप मे पढ़ा था। उस कहानी का सारांश यह है कि उस डॉक्टर को अपनी जवानी में किसी लड़की से प्यार हुआ। दोनों की शादी होने वाली थी, पर उसी बीच डॉक्टर कॉलरा का शिकार हुआ और किसी-ने उस लड़की के पास गलती मे यह खबर पहुंचा दी कि डॉक्टर मर गया। लडकी अपने मकान के छत पर खड़ी थी। उसने यह सुनते ही छत से कूदकर अपनी जान दे दी। डॉक्टर तो बच गया पर लडकी के बिना उसका रहना मुश्किल हो गया। इसके बाद डॉक्टर ने बहुत प्रयत्न किया और अन्त में उसे इस बात में सफलता मिल गई कि साल में एक बार, एक निश्चित समय पर लड़की की आत्मा आकर उससे बातें करे, ठीक उसी तरह जिस तरह कोई जिन्दा व्यक्ति पास में बैठकर बातें करता है। और कोई साठ साल का बूढ़ा डाक्टर, आज भी वर्ष की एक रात मे अपनी जवानी की प्रेयसी से दिल खोलकर बातें करता है।"

"विशाल, तुम इस कहानी में विश्वास करते हो ?" सुधीर ने आश्चर्य से टोका।

"हां सुधीर, जब मैं आत्मा के अमरत्व में और प्यार की शक्ति में विश्वास करता हूं तो इस कहानी में भी विश्वास करना ही पड़ता है।"

"तो तुम्हारे कहने का तात्पर्य शायद यह भी है कि यदि रेखा इस जन्म में तुम्हारी नहीं हुई तो मरने के बाद तुम दोनों मिलोगे अवश्य ?"

"सुधीर, तुम्हारा प्रश्न भले ही मजाक में पूछा गया हो पर है बहुत महत्व-पूर्ण। दो प्यार करने वाली आत्माएं, अगर उन्हें इस जन्म में नही मिलने दिया

जाता और उनका प्यार सच्चा है तो मरने के बाद मेरे ख्याल से अवश्य मिल सकती हैं। पर, जहां तक मेरे और रेखा का प्रश्न है, मुझे इस मिलन में सन्देह लगता है क्योंकि रेखा के प्रति मेरे प्यार में तो मुझे कोई सन्देह नहीं, पर रेखा को मेरे प्रति कितना प्यार है यह तो वही जाने। दूसरी बात यह कि यदि जान-बूझकर वह शरद या किसी और से शादी कर लेती है तो फिर यह स्पष्ट हो ही जाएगा कि वह मुझसे प्यार नहीं करती। ऐसी स्थिति में हमारे अलौकिक मिलन का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। पर सबसे बड़ी बात यह कि यदि रेखा मुझे इस जन्म में नहीं मिलती है और मेरे देखते-देखते वह किसी और की हो जाती है तो इसका मुझपर क्या प्रभाव पड़ेगा यह मैं नहीं जानता।"

"पर विशाल, तुम्हारे सपने के बारे में पूछना तो मैं भूल ही गया था। क्या तुम सपनों पर भी विश्वास करते हो ?"

"हां सुधीर ! भविष्य की बहुत सारी घटनाएं ऐसी होती हैं जिनका आभास यदि हम सजग रहें तो सपनों तथा अन्य माध्यमों द्वारा पहले ही मिल जाता है। तुमने 'टेलीपैथी' का नाम भी सुना होगा। मुझे उसमें बहुत विश्वास है और मैंने इस क्षेत्र में कुछ प्रयोग भी किए हैं। मुझको इन प्रयोगों में काफी प्रोत्साहन मिला है।"

"तो फिर, तुम्हारा पत्र आया क्यों नहीं ?"

"यह मैं कैसे जानूं ?"

"और तुम्हारा सपना ?"

"सपने में तो केवल मैंने रेखा को पत्र लिखते देखा था।"

"तो वह छोड़ना भूल गई।"

"यह तो वही जानें।" विशाल ने छोटा-सा उत्तर दिया।

"विशाल, मेरे समझ में यह प्यार-व्यार का चक्कर बहुत बुरा है। तुम तो जानते ही हो मेरी क्या हालत थी जब मुझे लीला से प्यार हुआ था। वह तो कहो वह तुम्हारी रेखा की तरह बेवफा नहीं निकली, नहीं तो सच कहूं मुझे तो लगता था मैं···।"

"फांसी लगा जाऊंगा यही न ?" विशाल बीच ही में बोल पड़ा।

"हां यार, तुमने तो मेरी मुंह की बात छीन ली।" सुधीर ने प्रसन्न होते हुए कहा।

"जानते हो सुधीर, तुम्हारी सफलता का राज क्या है ?" विशाल मुस्कराते हुए बोला।

"नहीं यार।"

"तुम्हारी प्रयसी 'रकार' वाली नहीं थी।" कहकर विशाल जोरों से हंस पड़ा।

"मतलब ?" सुधीर को आश्चर्य हुआ।

"मतलब यह कि रूपा, रेखा, रीता, रोमा, रम्भा इनका कोई ठिकाना नहीं।" विशाल की हंसी अब भी जारी थी।

"यह तो तुम्हारी कोई नई खोज मालूम पड़ती है।" सुधीर ने भी हंसते हुए कहा।

"खोज नहीं यार ! मैं तो 'सेकेन्ड हैन्ड' बात बोल रहा हूं।"

"नहीं समझा।"

"समझोगे क्या ? अन्दर की बात तुम्हें जरा देर में समझ में आती है। वह जो डाकबाबू है न, जिसके यहां से मैं आ रहा हूं, उसको एक रकारवाली से प्यार हो गया और वह उसे पत्ता बताकर एक मिलिट्री वाले के साथ भाग गई। यह 'खोज' उसीकी है। जब मैं खाली हाथ अपना-सा मुंह लिए लौटने लगा तो वह बोला—'बाबू, ये 'र' वाली ! ना बाबा ! ना ! उनका कोई भरोसा नहीं।"

इस बात पर विशाल और सुधीर दोनों जोरों से हंस पड़े और फिर विशाल अपनी चारपाई पर लेटते हुए बोला—"सुधीर अब जाकर सो जाओ। अभी रात कुछ बाकी है। और हां, कल दो बजे यहां से चलने का प्रबंध करो। अब मुझसे दार्जिलिंग में रहा नहीं जाता।"

"सच ?" सुधीर उठते हुए बोला।

"हां, एकदम सच। जिस ध्येय से हम दार्जिलिंग आए वह तो पूरा होने से रहा। रेखा की याद तो तुम जानते ही हो, यहां भी मेरा पिंड नहीं छोड़ रही। इससे अच्छा है हम लौट ही चलें।"

बारह

रेखा तीन दिन तक कॉलेज नहीं गई तो वीणा तीसरे रोज शाम को उसके यहां पहुंची। रेखा उस समय अपने ड्राइंगरूम में एक सोफे पर लेटी कुछ पढ़ रही

थी। उसका चेहरा उतरा हुआ था और लगता था इधर दो-तीन रोज से उसका स्वास्थ्य ठीक नहीं रहा है। वीणा ने आते ही कहा—"रेखा, तुम्हारी तबीयत तो ठीक है?"

"हां," रेखा ने छोटा-सा उत्तर दिया।

"तुम, तीन रोज तक कॉलेज नहीं गई?"

"और मैं अब कॉलेज जाऊंगी भी नहीं।" रेखा ने लेटे ही लेटे उत्तर दिया।

"समझ गई, कॉलेज में तुम्हारी तबीयत नहीं लग रही है। पर, अब चिन्ता की बात नहीं, वे आ गए।"

"कौन?" रेखा ने हाथ की किताब फेंकते हुए उत्सुकता से पूछा।

"विशाल।" वीणा ने छोटा-सा उत्तर दिया। उसके मुख पर एक मन्द मुस्कान खेल रही थी।

"वीणा ! ! !" और रेखा उठकर वीणा से लिपट गई।

"अरे बैठ तो रेखा। खुशी में इतना पागल नहीं होते। मुझसे इस तरह लिपट गई जैसे मेरी जगह...।"

"धत्!" रेखा ने वीणा के मुख पर हाथ रख दिया और फिर उसे खींचकर सोफे पर अपनी बगल में बैठाती हुई बोली—"अच्छा वीणा, बोल तो वे कैसे लगते हैं?"

"बहुत सुन्दर।" वीणा ने कहा।

"धत्! तुम तो मजाक कर रही हो, मैं पूछती हूं उनका स्वास्थ्य कैसा है?" रेखा वीणा के और पास सरक आई थी और उसने अपना चेहरा उसके कन्धे पर रख दिया था।

"बड़ी आई स्वास्थ्य पूछने वाली!" वीणा ने चुटकी ली, "पहले तो उनकी उपेक्षा कर उनका स्वास्थ्य चौपट किया, अब पूछती है उनका स्वास्थ्य कैसा है। जा मैं नहीं बताती।"

"अच्छा नहीं बताती। मेरा क्या, मैं अभी दौड़ी-दौड़ी कॉलेज चली जाती हूं। वहां जाकर आख भर देख लूंगी।" रेखा ने कहा और उठने को हुई।

"जा, जैसे वे अब तक तुम्हारे लिए बैठे हुए हैं! पता है पांच बज रहे हैं।"

"तो मैं उनके घर पर चली जाऊंगी।" रेखा ने शीघ्रता से कहा।

"वाह री घर जाने वाली! घर तो दुल्हन बनकर जाना। अभी जाने से क्या लाभ?" वीणा ने रेखा की ठुड्डी उठाते हुए कहा।

"वीणा!" रेखा ने शरमाकर कहा और तभी उसे शरद की बात याद आई।

'विशाल देवता है तो वीणा देवी है, एक देवता एक देवी को ही प्यार क्यों नहीं करेगा जो तुम्हारे समान पतिता को उठाने के लिए नीचे गिरेगा ?' यह सोचकर रेखा का मन उदास हो गया और वह बोली—"वीणा, मैं एक बात पूछूं ?"

"पूछो !"

"मैं विशाल के लायक नहीं हूं न ?"

"क्यों ? तुम ऐसी बातें क्यों करती हो ?"

"तुम तो मुझे जानती हो मैं विशाल के समान विशुद्ध नहीं हूं।" रेखा ने उदास होते हुए कहा।

"धत् पगली, ऐसी बात नहीं करते। आदमी कोई बुरा नहीं होता री ! परिस्थितियां उसे बुरा बना देती हैं और आदमी को जब अपनी बुराई के लिए पश्चात्ताप होता है और बुराई की राह छोड़ जब वह भलाई की राह अपना लेता है तो उसका सारा पाप समाप्त हो जाता है। तुम तो अब एकदम स्वच्छ हो रेखा। और विशाल को मैं जानती हूं, यदि तुम उनको दिल से प्यार करोगी तो वह तुम्हारी सारी गलतियों को माफ कर देंगे। विशाल के समान व्यक्ति के लिए सच्चे प्यार की बहुत आवश्यकता है। तुम्हारा प्यार पाकर वे और निखर जाएंगे।"

इन बातों सुनकर रेखा को बहुत प्रसन्नता हुई और उसे शरद के द्वारा कही बातें कोरी मनगढ़न्त लगीं और उसने वीणा को झकझोरते हुए कहा—"वीणा, मैं आज बहुत खुश हूं।"

"मैं भी बहुत खुश हू रेखा।" वीणा ने रेखा का हाथ अपने हाथ में लेते हुए कहा।

"क्यों ?" रेखा के मुख से अनायास निकल गया।

"इसलिए कि आज का दिन तुम्हारी खुशी का दिन है और आज तुम बहुत दिनों के बाद सीधी राह पर आ गई हो।" वीणा ने बिना किसी बनावट के कहा।

"वीणा !" रेखा ने वीणा के कंधे पर अपना चेहरा टिकाते हुए कहा, "मैं कितनी भाग्यशालिनी हूं जो मुझे तुम्हारे समान मित्र मिली है।"

"भाग्यशालिनी तुम इसलिए नहीं हो रेखा कि तुम्हें मेरे समान मित्र मिली है, बल्कि इसलिए हो कि तुम्हें विशाल के समान जीवनसाथी मिला है।" वीणा ने कहा और वह उठने को हुई।

"क्यों ?" रेखा ने कहा।

"मैं घर पर बिना किसीसे कहे यहां दौड़ी चली आई। अब चलना चाहिए। तुम्हें चलना हो तो चलो मेरे साथ।"

रेखा जाने को तैयार हो गई पर कुछ सोचकर बोली, "नहीं वीणा, मुझे छोड़ दो।"

'अच्छा भाई, तुम ठहरो और अपने विशाल के बारे में सोचो, पर रात भर सोचते ही मत रह जाना। कल तो कालिज में उन्हें भर आंख दिखोगी ही।" यह कहकर वीणा चली गई।

दूसरे दिन रेखा कालिज गई तो वह सबसे आगे की बेंच पर बैठी। वह आज नीचे से ऊपर तक पीली थी। पीले रंग की साड़ी, पीले रंग का ब्लाउज और फिर केशों में पीला रिबन। 'दर्शनशास्त्र-प्रतिष्ठा' का पहला क्लास विशाल का ही था। विशाल ने कमरे में प्रवेश किया। सभी लड़के यन्त्र-चालित से सीधे खड़े हो गए। उनके बैठने का इशारा करने पर सभी लड़के बैठ गए पर रेखा अपनी जगह पर खड़ी की खड़ी रह गई। विशाल के स्वास्थ्य में पहले से ज्यादा सुधार हो गया था और उसके चेहरे की चमक और बढ़ गई थी। नीचे से ऊपर तक सफेद सूट में लेक्चर टेबुल के पास खड़े विशाल का व्यक्तित्व आज बड़ा ही आकर्षक लग रहा था। कोई दो मिनटों तक रेखा विशाल की तरफ टकटकी लगाए रही और विशाल रेखा की तरफ। उन दोनों के अलावा क्लास में और लोग भी हैं इसका भान ही उन्हें नहीं था। रेखा की बगल में बैठी वीणा ने रेखा की साड़ी के पल्ले को जोर से खींच दिया और तब रेखा को अपनी स्थिति का भान हुआ और वह बिजली की गति से बैठ गई। बैठने के बाद वह कुछ देर तक झेंपी-सी रही पर विशाल ने भाषण प्रारम्भ किया तो रेखा ने अपनी आंखें फिर उठाईं और पूरे घंटे तक वह उन्हें देखती रही। क्लास समाप्त होते ही विशाल क्लास से निकले और अपने विभाग में चले गए। विशाल को अपने विभाग में बैठे कोई दस मिनट ही हुए थे कि रेखा और वीणा एक साथ वहां पहुंच गईं। विशाल ने उन्हें देखते ही पूछा—

"कहिए आप लोग कैसी हैं?"

"सब आपकी कृपा है।" वीणा ने जवाब दिया।

"ओ! आप?" विशाल रेखा की ओर मुड़कर बोले। रेखा ने सिर झुका लिया और उसके मुख से कोई आवाज नहीं निकली।

"यह आपसे शरमा रही हैं।" वीणा ने कहा।

"इसमें शरमाने की क्या बात है? हां, यह कहिए कि अभी तक मेरी पढ़ाई में कुछ सुधार हुआ है या नहीं। सुना था कि आपको मेरी पढ़ाई अच्छी ही नहीं लगती।"

विशाल की यह बात सुनकर रेखा का मुख शर्म से एकदम लाल हो गया। वह बड़ी मुश्किल से बोली—"नहीं, यह झूठी बात है। आपमें अच्छा कौन है!" विशाल को यह 'आपमें अच्छा कौन है' वाक्य बड़ा अच्छा लगा। उन्हें लगा रेखा ने जान-बूझकर इस वाक्य का इस तरह प्रयोग किया है।

"इसका मतलब कि मैं आपको पसन्द आ गया?" विशाल के मुख से अनायास यह वाक्य निकल गया और उन्हें स्वयं अपने वाक्-चातुर्य पर आश्चर्य हुआ। रेखा ने फिर सिर झुका लिया। पर वीणा ने उसी समय कहा—"इसकी तरफ से मैं हां कहे देती हूं," इसपर विशाल और वीणा दोनों ठठा-कर हंस पड़े और रेखा का मुख एक बार फिर लाल हो गया।

"अच्छा अब हम चलें, नहीं तो रेखा की हालत और नाजुक हो जाएगी।" वीणा ने कहा और आगे-आगे रेखा और पीछे से वीणा विभाग के बाहर चली गई।

कॉमन-रूम में लौटते ही रेखा ने वीणा पर बनावटी रोष दिखाया—"तुम बड़ी वो हो, वीणा, मैं तुम्हारे साथ अब कभी नहीं जाऊंगी।"

"हां री, अब मेरे साथ क्यों जाएगी, अब तो थोड़े दिनों में तुम विशाल का घर बसाओगी और मैं फिर दाल-भात में मूसलचन्द मालूम पड़ने लगूंगी।" वीणा ने चुटकी ली।

"धत्!" रेखा ने कहा और वह वीणा के पास से भागकर दूसरे कमरे में चली गई।

तेरह

रेखा के पिता श्री सुशान्त बन्द्योपाध्याय अपने बरामदे में बैठे हुए थे। उनके सामने एक छोटा-सा टेबुल और उसके आसपास दो-तीन कुर्सियां पड़ी हुई थीं। सुशान्त बन्द्योपाध्याय अपने ऑफिस की किसी फाइल में अपना ध्यान

लगाए हुए थे। कोई साढ़े पांच बज रहे थे। शाम का धुंधलका धीरे-धीरे गाढ़ होने लगा था। सुशान्त अपनी फाइल समेटने ही वाले थे कि सामने से विशाल आ गए।

"नमस्कार।" विशाल ने नज़दीक आकर कहा।

"नमस्कार, ओ आपनि ? सॉरि, आप ? कब आए ?" यह कहते-कहते सुशान्त अपनी कुर्सी से उठ खड़े हुए।

'मैं कल सुबह ही आया। बैठिए न।" यह कहकर विशाल कुर्सी पर बैठ गए। उनके साथ सुशान्त भी अपनी कुर्सी पर बैठ गए और बोले "केमन ? मेरा मतलब आप अच्छी तरह तो हैं ? देखिए न अपनी ऐसी आदत हो गई कि मैं तो तंग आ गया हूं। लाख कोशिश करता हू हिन्दी बोलते-बोलते बंगला बाहर आ ही जाती है।"

"कोई बात नहीं, आप मुझसे बंगला में ही बातें कर सकते है। वैसे मेरा स्वास्थ्य इस समय अच्छा है। आगे देखें कैसा रहता है। आप कैसे है?"

"चोल छे केनो रकम। बात है कि हम लोगों का काम ही ऐसा है कि कभी यहा कभी वहां। टूर ड्यूटी तो। एई आश्चि पाच दिन परे।" (टूर ड्यूटी है न, अभी तो पांच दिन बाद आया) इतना कहकर रेखा के पिता ने घर की तरफ आवाज़ दी—"रेखी, ओ रेखी।" और फिर विशाल की तरफ मुड़कर बोले—"रेखी, हम लोग इसे प्यार से बोलते हैं। बहुत पोढती है, न जाने क्लास में कैसा करती है।"

"बहुत तेज़ है। युनिवर्सिटी मे दर्शनशास्त्र मे हाइएस्ट अंक लाएगी।" विशाल ने कहा और उसका ध्यान दरवाजे की तरफ चला गया जहा से रेखा निकली आ रही थी। अभी उसने कॉलेज के कपड़े बदले भी नही थे, उसी पीले पोशाक में वह अब भी नीचे से ऊपर तक सजी हुई थी जैसे उसे मालूम था कि आज विशाल अवश्य आएंगे।

"नमस्कार।" रेखा ने समीप आकर कहा।

"नमस्कार," विशाल ने जवाब दिया और रेखा की ओर पूरी नज़र देख-कर फिर वे उसके पिता की तरफ देखने लगे।

"बोसो" (बैठो) उसके पिता ने कहा। इसके बाद फिर वे विशाल की तरफ घूमकर बोले—"आमि आश्चि। (मैं आता हूं) आप तब तक कुछ पूछिए, देखिए कि रकम कोर छे।" (देखिए कैसा करती है) यह कहकर उसके पिता अन्दर चले गए।

"कैसी हैं आप ?" विशाल ने पूछा।

"अच्छी हूं," रेखा ने धीरे से कहा और फिर सिर झुकाकर बोली, "और आप ?"

विशाल को लगा जैसे वे आनन्द के समुद्र में गोता लगा गए हों। आज तक रेखा ने कभी उनसे ऐसा प्रश्न नहीं पूछा था। आनन्द से भरते हुए बोले—

"मेरा क्या ? मेरी खुशी तो आपकी खुशी पर निर्भर है।"

"यह क्या कहते हैं आप ? मैं तो आपके पैरों की धूल के समान हूं," रेखा ने सिर झुकाए ही कहा।

"पर, मैं तो दिल के अन्दर ही अन्दर आपकी पूजा करता हूं। आप मानें या न मानें पर, आप ही मेरी सब कुछ है।" विशाल ने रेखा की तरफ सीधे देखते हुए कहा।

"यह मेरा सौभाग्य है," रेखा ने छोटा-सा उत्तर दिया और उसकी आंखें उठकर विशाल की आंखों में मिल गईं।

"रेखा," विशाल ने धीरे परन्तु गम्भीरता से कहा, "क्या मैं मान लूं कि मेरी तपस्या पूरी हुई ?"

रेखा को लगा कि उसके हृदय पर किसीने जलता अंगारा रख दिया हो। विशाल से ऐसे प्रश्न की उसे उम्मीद नहीं थी। साथ ही उनकी बातों से उसे लगा कि उन्होंने सचमुच उसके चलते बहुत कष्ट उठाया है। उसकी आंखें छलछला आईं और उसका गला भर गया। बड़ी मुश्किल से उसने कहा, "मुझे माफ कीजिए। पर मैं सच कहूं तो मैं आपके योग्य नहीं हूं।"

"योग्य और अयोग्य की बात तुम नहीं समझ सकतीं रेखा। रत्न पहचानना जौहरी का काम है, मैंने तुम्हें पहचान लिया है और तुम चाहे मेरी बनो या न बनो, पर मैं तो सदा के लिए तुम्हारा हो चुका हूं।" विशाल एक सांस में ही सारी बातें बोल गए।

"अब सोच लीजिए। मैं फिर कहती हूं, मैं आपके समान विशुद्ध नहीं हूं। मैं आपको धोखा नहीं देना चाहती। मेरा भूत···"

"भूत, वर्तमान की बात छोड़ो रेखा," विशाल के बीच में टोककर कहा, "हीरा जब धूल में रहता है वह गन्दगी में सना ही रहता है। तुम एक बार हां कहो और फिर देखो तुम्हारे प्रकाश से तुम्हारे साथ-साथ मेरा व्यक्तित्व भी किस तरह निखर आता है।"

"प्रो० विशाल !" रेखा ने धीरे से कहा और उसकी आंखें एक बार

विशाल की आंखों से मिलकर फिर झुक गई।

"प्रो० विशाल नहीं केवल विशाल।"

"वि·········शा········ल!" रेखा की आंखें फिर एक बार उठीं और झुक गई।

"रेखा, तुम मेरी प्रेरणा हो," विशाल ने धीमी आवाज में कहा।

"और आप मेरे देवता," रेखा ने भी झुके सिर से आवाज दी।

इसी समय रेखा के पिता नौकर के साथ चाय की ट्रे लेकर वहां पहुंच गए। रेखा ने दो कप चाय बनाकर विशाल और अपने पिता को दिया और उठकर भीतर चली गई। चाय पीने के बाद विशाल ने रेखा के पिता से एकाध बातें कीं और फिर उठकर चलने को हुए।

"क्यों इतनी जल्दी क्यों?" रेखा के पिता ने टोका।

"चलूंगा, अभी तो कल ही आया हूं, कुछ लोगों से मिलना है।"

"अच्छा तो फिर आइएगा।"

"अच्छा।" विशाल ने जवाब दिया और रेखा के पिता को नमस्कार कर चले गए।

रेखा के घर से आकर विशाल सीधे सुधीर यहां पहुंचे। रेखा और सुधीर के घर के बीच की दूरी कोई एक मील की होगी। इस दूरी को उन्होंने पैदल ही पार किया। प्रसन्नता के मारे उनके पैर जमीन पर नहीं पड़ रहे थे और इस दूरी को उन्होंने कितनी देर में पार किया, रास्ते में कौन-कौन लोग मिले तथा कितने लोगों से वे आमने-सामने टकरा गए इसका उन्हें ध्यान नहीं था।

सुधीर अपने कमरे में पुस्तकों को झाड़-पोंछ रहा था। उसकी पीठ दरवाजे की तरफ थी। विशाल ने कमरे में घुसते ही सुधीर को पीछे से पकड़ लिया और चिल्ला पड़े—"सुधीर, सुधीर!!"

सुधीर तो एक क्षण के लिए विशाल के इस असामान्य व्यवहार पर भौचक्क रह गया, पर उसने किसी तरह विशाल से अपने को अलग किया। फिर उसने विशाल पर अपनी दृष्टि डाली तो देखा खुशी के मारे उसका चेहरा एकदम लाल हो गया है और उसकी सांसें तेज चल रही हैं।

"विशाल!!"

"सुधीर!! सुधीर!!" और विशाल ने फिर एक बार सुधीर को गोद में उठा लेना चाहा। सुधीर छिटककर अलग हो गया और बोला—

"मैं पूछता हूं प्रोफेसर, तुम्हारे होश-हवास तो ठीक हैं ?"

"नहीं सुधीर, मैं होश-हवास खो बैठा हूं। मैं अपने में नहीं हूं। आह ! मैं कितना खुश हूं। सुधीर ! सुधीर !!" और सुधीर को लगा विशाल की मानसिक स्थिति असंतुलित हो गई है।

"विशाल, क्या तुम पागल हो गए ?" सुधीर ने कुछ आश्चर्य, कुछ भय और कुछ दुःख मिश्रित शब्दों में कहा।

"एकदम पागल सुधीर ! एकदम पागल ! और मैं चाहता हूं इतना ही पागल बना रहूं।" और विशाल फिर एक बार सुधीर को गोद में उठा लेने के लिए लपके। सुधीर बेतहाशा दरवाज़े की तरफ भागा और उसने बाहर आकर सांकल चढ़ा दी। दरवाज़े के बाहर खड़ा वह स्थिति पर विचार कर ही रहा था और यह सोच रहा था कि कॉलेज में तो विशाल ठीक ही थे, इतनी जल्दी उन्हें क्या हो गया कि तभी दरवाज़े की बगल की खुली खिड़की पर विशाल की आवाज़ सुनाई पड़ी, "अरे यह क्या किया तूने सुधीर ? तुम समझे कि मैं सचमुच पागल हो गया ! हे भगवान, मैं तो खुशी में पागल हुआ जा रहा हूं।" और विशाल ज़ोर से हंस पड़ा।

सुधीर ने खिड़की के पास आकर तसल्ली के लिए पूछा, "तुम रेखा के यहां गए थे क्या ?"

"हां यार, अन्दर तो आओ. तुम तो ऐसे भाग रहे हो जैसे मैं आदमी न होकर कोई पागल कुत्ता होऊं। कितनी अच्छी-अच्छी बातें कहनी हैं तुमसे।" विशाल खिड़की के पास से ही बोला।

"क्या बातें करनी हैं ? बहुत प्यार करने वालों को देखा लेकिन तुम्हारे समान नहीं।" कहते हुए सुधीर किवाड़ खोलकर अन्दर आ गया और बैठते हुए बोला, "बोलो क्या हुआ ?"

"पूछो क्या नहीं हुआ ?" विशाल सुधीर के पास बैठते हुए बोले।

"मैं कहता हूं यार, कुछ कहो भी।" सुधीर कुछ समझकर बोला।

"तो सुनो।" और विशाल ने रेखा के साथ हुई पूरी बात सुना दी।

"बस !" विशाल की बात समाप्त होते ही सुधीर ने कहा।

"बस क्या ?" विशाल ने अपनी आंखें फाड़कर कहा।

"मैं पूछता हूं कि इसके बाद भी कुछ है, कि कहानी यहीं पर टांय-टांय-फिस हो जाती है ?"

"इसके बाद क्या ? यही कुछ कम है ?" विशाल ने पहले से दूने आश्चर्य

में कहा।

"तो इसीपर जनाब इतना उछल-कूद मचा रहे थे ! मैंने तो समझा कुछ हुआ।" सुधीर अपनी कुर्सी पर फैलकर बैठते हुए बोला।

"मैं कहता हूं सुधीर, तुम इतने दिनों के बाद भी मुझे नहीं समझ सके।" विशाल कुछ खिन्न होकर बोला।

"मैं तुम्हें इतने दिनों तक ठीक से नहीं समझ सका था, पर आज तुम्हें ठीक समझ गया। पर सुनो, मेरे एकाध प्रश्न का जवाब दो।"

"पूछो।"

"क्या रेखा तुम्हारे पास अकेली थी ?"

"हां।"

"क्या तुम लोगों की कुर्सियां बहुत पास थी।"

"हां।"

"वहां प्रकाश था या अन्धकार ?"

"कुछ-कुछ अन्धकार। शाम का धुंधलका गाढा हो गया था, पर बरामदे मे बत्ती जली थी।"

"तो तुम क्या केवल अपनी प्रियतमा का चेहरा ही देखे जा रहे थे ?"

"क्या मतलब ?" विशाल के चेहरे पर क्रोध का भाव स्पष्ट था।

"मतलब यह जनाब कि जरा उसके हाथ को अपने हाथ मे लेते, उसे दबाते, सहलाते। उसे···।"

"सुधीर !" विशाल लगभग चीख पडा, "तुम्हारा मेरे साथ इतने दिनों तक रहना व्यर्थ हुआ। तुम प्यार को सेक्स से मिला रहे हो।"

"मैं प्यार को सेक्स के साथ तो नहीं मिला रहा और मैं भी तुम्हारे इस सिद्धान्त मे विश्वास करने लगा हूं कि सेक्स को प्यार मे विवाह के बाद ही जाना चाहिए। पर, मेरा मतलब यह है कि जब रेखा और तुम्हारा प्यार यहां तक पहुंच ही गया और जब वह तुम्हारी प्रेरणा और तुम उसका आराध्य बन ही गए तो जो कुछ मैं कह रहा हूं, वह वहां आवश्यक ही नहीं अनिवार्य था। मेरे ख्याल से प्यार केवल मानसिक वस्तु ही नहीं उसका शारीरिक पक्ष भी है।"

"मैं आदर्श प्यार में उसकी कोई आवश्यकता नहीं समझता। यदि मेरा और रेखा का प्यार सच्चा है तो वह शारीरिक स्पर्श के बिना भी जिन्दा रहेगा।"

"तुम जानो और तुम्हारा काम, पर मुझे तो ऐसा लगता है कि चाहे प्यार हो या मैत्री या कोई भी अन्य सम्बन्ध, ध्यान दोनों पक्षों की आवश्यकताओं पर देना होता है। तुम भले ही भावनाओं द्वारा ही अपनी भूख मिटा लो, पर इसका क्या प्रमाण है कि रेखा भी भावनाओं की खुराक पर ही ज़िन्दा रह पाएगी? यदि तुम मेरी सलाह लेना चाहो तो मैं कहूंगा कि अवसर बड़ा अच्छा आया है और यदि तुम इसका ठीक से प्रयोग करो तो रेखा तुम्हारी हो जाएगी।"

"तो तुम्हें क्या अब भी रेखा को मेरी होने में सन्देह है?" विशाल ने आश्चर्य से कहा।

"सन्देह कुछ कम नहीं, बहुत है। प्यार में केवल 'प्रेरणा' और आराध्य बन जाना ही पर्याप्त नहीं। हर मानसिक भावना की एक स्वाभाविक शारीरिक प्रतिक्रिया होती है और इस प्रतिक्रिया को जबरदस्ती रोके रखना स्वाभाविकता का हनन है। छोटा-सा उदाहरण लो, तुम कोई सुन्दर फूल देखते हो तो तुम उसे केवल दूर से देखकर ही प्रसन्न नहीं हो जाते, तुम उसे छूना भी चाहते हो, दो क्षण उसके नजदीक गुनगुनाना भी चाहते हो। यही बात प्यार के साथ भी है। प्रिय-पात्र के अंग का एक हल्का स्पर्श, लाखों और करोड़ों आकाशी उड़ानों को एक ओर रखवा देता है। इसीलिए मैं कहता हूं कि रेखा को अपना बनाना है तो थोड़ा व्यावहारिक बनो, थोड़ा उसके और नजदीक जाओ।"

"मैं तुम्हारे बहकावे में अपने आदर्शों की हत्या नहीं कर सकता। मैंने तुमसे बहुत पहले ही कहा था कि मैं सच्चे प्यार में स्वार्थ का कोई अंश नहीं देखना चाहता। प्यार में किसी भी शारीरिक इच्छा की पूर्ति स्वार्थ के अलावा कुछ नहीं है।" विशाल ने एकदम गम्भीर होते हुए कहा।

"मैं तुम्हारे आदर्श की ऊंचाई का अन्दाज तो प्रयत्न करके भी नहीं लगा सकता पर मुझे एक बात अवश्य खटक रही है। तुमने 'अति सर्वत्र वर्जयेत्' की बात तो सुनी ही होगी। मैं भी मध्यम मार्ग में विश्वास करता हूं। भरसक दोनों सीमान्तों से अलग ही रहना चाहता हूं। मैं प्यार में सेक्स को नहीं लाना चाहता और यहां तक तुम्हारे और मेरे विचारों में साम्य भी है, पर मैं तुम्हारी तरह थोथी भावनाओं की उड़ान में भी विश्वास नहीं करता। तुम तो आज शाम की घटना पर खुशी में पागल हुए जा रहे हो और मुझे पूरा विश्वास है कि तुम आज रात-भर आकाश के तारे नहीं तो छत की कड़ियां अवश्य गिनते रहोगे, पर, मैं नहीं समझता कि कुछ ऐसी ही प्रतिक्रिया रेखा पर भी हुई

होगी, बल्कि मेरा ख्याल है कि वह तुम्हारे नाम को नहीं तो अपने भाग्य को अवश्य रोती होगी। भावनाओं पर पलने के लिए विशाल तुम्हारी तरह कुछ लोग ही पैदा होते हैं, अपनी खुराक सभी को जुबान पर रास आएगी, यह तुम कैसे समझ गए ? मैं मानता हूं आदर्श बड़ी चीज है पर जीवन के व्यावहारिक पक्ष की तरफ से भी तो हम आंखें नहीं मूंद सकते ! सच पूछो तो विशाल, सफल जिन्दगी आदर्शवादियों की नहीं, बल्कि व्यवहार-निपुण व्यक्तियों की होती है। मैं एक बार फिर कहता हूं कि रेखा को पाने के लिए तुम अपने आदर्श के आकाश से व्यवहार की भूमि पर उतरो, वरना मुझे भय है कि तुम्हारा आदर्श तुम्हींको खा जाएगा। तुम्हारे आज के पागलपन ने मेरे मन में एक महान भय का संचार कर दिया है।" सुधीर एक अनुभवी व्यक्ति की मुद्रा में बोल गया।

"सुधीर, तुम मेरे मित्र हो और मेरे अति निकट भी, इसलिए मैं तुम्हें केवल एक बात कहता हूं और वह यह कि प्यार और व्यावहारिकता ये दोनों दो पृथक चीज़ें हैं। प्यार, एक ऐसी मानसिक प्रतिक्रिया, एक ऐसा मानसिक सम्मोहन है जिसमें व्यावहारिकता सदा लुप्त हो जाती है। व्यावहारिकता का सम्बन्ध कृत्रिमता में है और प्यार बनावट से कोसों दूर है।"

विशाल की बात सुनकर सुधीर थोड़ा हंसा और बोला, "विशाल, तुम शायद मेरी बातों को ठीक से नहीं समझ सके। व्यावहारिकता का अर्थ तुमने कृत्रिमता से लगा लिया। पर मेरा मतलब तो यहां सिर्फ इतना था कि हमें दूसरों की आवश्यकताओं का भी ख्याल रखना चाहिए।"

"तुम यह कहना चाहते हो न कि रेखा एक पतिता लड़की है और उसे भावनात्मक खुराक के साथ शारीरिक सम्पर्क भी चाहिए ?"

"नहीं, मेरे कहने का मतलब सिर्फ इतना है कि रेखा और लड़कियों की तरह एक लड़की है और जिस तरह हर प्यार में पड़ी लड़की के कुछ न कुछ अरमान होते हैं वैसे ही उसके भी कुछ अरमान होंगे और उन्हें पूरा होना चाहिए।"

"सुधीर, तुम भूलते हो कि प्यार का अरमान एक ही है और वह है प्रिय-पात्र को सदा-सदा के लिए अपना बना लेना और इस तरह विवाह के सिवा न तो सच्चे प्यार का कोई अरमान है न कोई मंजिल।"

"मान लिया विवाह ही सच्चे प्यार की मंजिल है पर इस मंजिल के पहले मील के पत्थर भी तो हैं ?"

"मैं मंजिल का इच्छुक हूं और मील के पत्थरों पर रुकना नहीं चाहता

सुधीर।" विशाल की आवाज़ दृढ़ थी।

"तो विशाल, मेरे ख्याल से यह यथार्थ की तरफ से आंखें मूंदना होगा और यह स्थिति किसीके लिए भी खतरनाक हो सकती है।" सुधीर ने उसी दृढ़ता से जवाब दिया।

"हो सकती हो तो हो, पर मैं स्वार्थ की वेदी पर आदर्श की हत्या के लिए प्रस्तुत नहीं।"

"तब, तुमको प्यार की हत्या करनी पड़ सकती है।"

"मैं ऐसा नहीं मानता।" कहकर विशाल उठने को हुआ। विशाल को उठते देख सुधीर को लगा शायद उसे उसकी बात चुभ गई है और वह नाराज होकर जा रहा है। विशाल के उठते ही वह भी उठ गया और उसका हाथ पकड़ते हुए बोला, "क्यों तुम नाराज हो गए क्या?"

"इसमें नाराज होने की क्या बात है? मुझे तो खुशी है कि तुमने इतने दिनों के बाद ही सही अपने विचारों को दृढ़ता से मेरे समक्ष रखा। यह तो अपने सिद्धान्तों और अपनी मान्यताओं की बात है। हर व्यक्ति अपने रूप से सोचने को स्वतन्त्र है। मैं तो प्यार में हूं और तुम जानते ही हो प्यार करने वाला जो कुछ करता है, जो कुछ सोचता है, सब ठीक ही समझता है। हो सकता है मुझे ही कुछ दिनों के बाद अपने विचार बदलने पड़ें पर मुझे तो अब तक यही लगता है कि मैं ठीक रास्ते पर हूं। अच्छा, मैं चलूं आज साढ़े आठ बजे मैंने वीणा के पिता को मिलने का वचन दिया है। वे मेरे घर पर प्रतीक्षा करते होंगे।"

इतना कहकर विशाल सुधीर के कमरे से बाहर आ गया।

चौदह

रेखा और विशाल की उस शाम की मुलाकात के दो दिन बाद की घटना है। सुबह के आठ बजे थे। रेखा अपने बरामदे में बैठी थी। उसके पिता कहीं बाहर गए हुए थे और मां अन्दर काम में लगी थी। रेखा किसी पत्रिका में ध्यान लगाए बैठी थी कि उसे सुनाई पड़ा, "नमस्कार मिस रेखा।"

रेखा ने आंखें उठाईं तो देखा शरद सामने खड़ा है। रेखा का जी जलकर राख हो गया और वह कहने ही वाली थी कि चले जाइए पर शरद बिना उसे

मौका दिए सामने की कुर्सी पर बैठ गया। रेखा ने शरद की ओर देखा भी नहीं और पत्रिका में ध्यान लगाने का बहाना करने लगी।

"मिस रेखा, मुझे आपसे एक जरूरी बात करनी है।" शरद ने दो मिनटों के बाद मौन तोड़ा।

"पर मुझे आपकी कोई बात सुनने का समय नहीं है।" रेखा ने शरद की तरफ देखे बिना ही कहा।

"मैं आपसे इसके लिए अलग से कोई समय नहीं मांगता। अपनी बात कह देता हूं, आप सुनिए या न सुनिए। आपको शायद यह जानकर आश्चर्य हो कि वीणा और विशाल का प्यार बहुत आगे बढ़ गया है और मेरी यह भविष्यवाणी कि देवता देवी को ही अपनाएगा सही होने जा रही है।" इतना कहकर वह चुप हो गया और रेखा के मुंह की ओर देखने लगा।

रेखा क्रोध मे भरकर बोली, "देखिए मिस्टर शरद, अगर अपनी नासमझी मे मैंने आपपर अपना प्यार प्रकट कर दिया और आपको कुछ राज की बातें बता दीं तो इसका यह मतलब नहीं कि आप ख्वामखाह उनका नाजायज फायदा उठाने का प्रयत्न करें और आप यह भी कान खोलकर सुन लीजिए कि मुझे उन बातों से कोई डर नहीं और आप चाहें तो उनका सरेआम विज्ञापन कर सकते हैं।"

"मिस रेखा, अगर आप यह समझती हैं कि आपकी बातों का जानकार होने के नाते मैं उनका नाजायज लाभ उठा रहा हूं, तो यह आपका भ्रम है। बात केवल इतनी है कि जिस तरह आपको मुझसे प्यार हो गया था उसी तरह मुझे भी आपसे प्यार हो गया है। आपको मेरी बातों पर विश्वास नहीं हो तो मैं कैसे बताऊं पर जिस तरह आप बदलकर एक नई रेखा हो गई हैं उसी तरह मैं भी बदलकर अब एक नया शरद बन गया हूं। इस स्थिति मे मुझे इतना ही कहना है कि जब वीणा और विशाल एक होने जा रहे हैं तो फिर इसमें क्या हर्ज है कि हम, जो कभी एक साथ मिलकर चलने का स्वप्न देखते थे, अब सदा के लिए एक हो जाएं।" शरद इतना कहकर चुप हो गया और रेखा अपना ध्यान पत्रिका में ही जमाए रही और बिना अपनी आंखों को उठाए मुस्कराकर बोली, "तो यह शतरंज की नई चाल है।"

"चाल के लिए तो मैं तुम्हारे समक्ष बदनाम हो ही गया हूं पर यह मुस्कान आंसुओं मे बदल जाय अगर तुम इस समय वीणा के यहां जाकर वहां की चाल को देख लो।"

"क्या मतलब ?"

"मतलब तो अब अपनी आंखों से देख लो और कानों से सुन लो।" अच्छा तो मैं चला और कभी आवश्यकता पड़ी तो कॉलिज में मुझे बुला लेना।" इतना कहकर शरद उठकर चला गया।

शरद चला गया पर अपनी बातों से रेखा के मन में एक भारी हलचल जगा गया। साथ ही, शरद का आकर इतनी आसानी से चला जाना, रेखा को आश्चर्यजनक लगा और उसने सोचा शायद शरद की बात सही हो। वह वीणा के यहां जाने के लिए तैयार हो गई।

वीणा के पिता उसी कॉलिज में जीवविज्ञान के विभागाध्यक्ष थे जिसमें वीणा और रेखा पढ़ती थी। डा० सुवर्णो, वीणा के पिता, काफी पैसे वाले व्यक्ति थे और उनकी उम्र पचास साल की रही होगी। पचीस साल की नौकरी में उन्होंने काफी पैसे जोड़े थे और अपनी एक बहुत सुन्दर कोठी बना ली थी।

कोठी के फाटक पर पहुंचते ही रेखा को विशाल की आवाज सुनाई पड़ी और वह जहा की तहा खड़ी हो गई। विशाल के, इसके पहले वीणा के यहां मुझे जाने की बात उसने सुनी भी नहीं थी और उनके यहां आने का उसे कोई कारण भी नहीं समझ में आ रहा था। रेखा ने ध्यान से सुना तो आवाज वीणा के कमरे से आ रही थी और वह वीणा और विशाल की मिली-जुली आवाज थी। रेखा जहा खड़ी थी वहां उसके दोनों तरफ बाएं-दाएं दो-दो कमरे थे। दाईं तरफ का कमरा वीणा के पढ़ने का था और आवाज उसी ओर से आ रही थी। बरामदे से नीचे उतरकर वह कमरे के पीछे चली गई और दीवार से सटकर खड़ी हो गई। उसके सिर के ठीक ऊपर ही कमरे की खिड़की खुलती थी, जिसपर लाल रंग का पर्दा टंगा हुआ था। यहां खड़ा होते ही रेखा को पूर्ण विश्वास हो गया कि आवाज वीणा और विशाल की ही है। एक क्षण तो उसे लगा कि उसके शरीर का सारा रक्त सूख गया और उसकी कमर तथा टांगें बेकार होकर उसके बोझ को संभालने में असमर्थ हो गईं। वह और जोर से दीवार से चिपक गई और किसी तरह वहां खड़ा रहने की ताकत बटोरने लगी कि उसे वीणा की आवाज स्पष्ट सुनाई पड़ी—"तो इसका मतलब यह हुआ कि आपका प्यार अब भी पहले की ही तरह है और उसमें रत्ती-भर भी कमी नहीं आई ?" और रेखा को लगा उसके सामने की सभी चीजें तेजी से घूमने लगी हैं। वह दोनों हाथों से अपने सिर को दबा गिरने से बचने का प्रयत्न

करने लगी कि विशाल की आवाज उसके कानों में पड़ी,—"वीणा, तुझे मुझ-पर इस तरह अविश्वास नहीं करना चाहिए। मेरा प्यार पहले जैसा था, आज उससे ज़रा भी कम नहीं है।" यह सुनते ही रेखा को लगा आगे कुछ भी सुनकर वह पागल हो जाएगी। वह उसी क्षण वहां से हटकर फाटक के बाहर हो गई।

पन्द्रह

आज रविवार था। वीणा रेखा के यहां दिन के कोई ग्यारह बजे पहुंची। रेखा के कमरे का दरवाजा अन्दर से बन्द था। वीणा ने रेखा को आवाज दी पर अन्दर से कोई जवाब नहीं मिला। वीणा की आवाज सुनते ही रेखा की मां दौड़ी-दौड़ी आई और वीणा से बोली, "देखो न, उसे क्या हो गया है। नौ बजे से ही कमरे में बन्द है, कितनी आवाज दी पर नहीं खोलती, तुम किसी तरह से दरवाजा खुलवाओ। अभी उसने खाना आदि भी नहीं खाया है।"

वीणा ने अनेक बार आवाज दी और फिर लौट जाने और कभी न आने की धमकी दी तो रेखा ने दरवाजा खोला। रेखा की आंखें एकदम लाल थीं और उसका पूरा चेहरा आंसुओं से सना था। वीणा रेखा को खींचकर पलंग पर ले गई और उसके रोने का कारण पूछा। रेखा ने वीणा के लाख प्रयत्न के बाद भी कारण बताने से इनकार कर दिया।

"क्या तुम्हें विशाल के प्यार पर सन्देह है?" वीणा ने स्वयं आरम्भ किया। इस बात पर रेखा एकदम फफककर रो पड़ी।

रेखा को चुप न होते देख वीणा ने आगे कहा, "देखो अगर तुम विशाल के प्यार पर सन्देह करने के कारण दुःखी हो तो उसकी कोई आवश्यकता नहीं है। मैं आज तुम्हें एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण बात बताने आई हूं, जिसको सुनकर तुम्हारा सारा सन्देह दूर हो जाएगा।"

"मैं कुछ भी सुनना नहीं चाहती। मेरी तबीयत ठीक नहीं है। तुम मेहर-बानी करके मुझे तंग न करो और मुझे मेरे हाल पर छोड़ दो।" रेखा सिस-कियों के बीच बोली।

"तुम कुछ सुनो या नहीं पर मैं तुझे बिना सुनाए रह भी नहीं सकती। जानती हो विशाल की थीसिस छप गई ?" वीणा ने रेखा के विरोध की चिन्ता न करते हुए कहा।

"छप गई तो उसमें मुझे क्या लेना है ?" रेखा झुंझलाकर बोली।

"लेने-देने की बात नहीं, मैं केवल इतना कहना चाहती थी कि इस थीसिस के पीछे किसीकी जबरदस्त प्रेरणा है। तुम तो जानती ही हो कि विशाल को इस कॉलेज में आने के कोई डेढ़ साल बाद ही डी० लिट० की डिग्री मिली। यहां आने के कोई एक साल पहले ही वे अपना नाम डी० लिट० के लिए रजिस्टर्ड करा चुके थे, पर थीसिस के नाम पर एक अक्षर भी नहीं लिखा गया था। यहां आने के कुछ ही दिनों बाद उन्हें एक लड़की से प्यार हुआ। फिर क्या था उन्हें थीसिस लिखने की धुन सवार हुई और जानती हो दो महीने में पूरी थीसिस लिखकर तैयार हो गई। विशाल का कहना है कि इस 'थीसिस' के हर पन्ने क्या हर पंक्ति और हर अक्षर उस लड़की के नाम से सना हुआ है। लिखते हुए हर समय उस लड़की की मूर्ति उनके समक्ष नाचती रही है। उन्होंने पांडुलिपि के हर पृष्ठ पर कई जगह उस लड़की का नाम काटा और लिखा है।" वीणा यहां आकर चुप हो गई और रेखा की तरफ देखा। पर रेखा ने कुछ जवाब नहीं दिया। वह अपने चेहरे को दोनों हाथों से छिपाए औंधी पड़ी थी।

"विशाल का कहना है कि" वीणा ने आरम्भ किया, "वे इतनी तेजी से काम उस लड़की को प्रसन्न करने के लिए ही कर रहे थे और शीघ्र ही डी० लिट० की डिग्री लेकर, थीसिस छपवाकर उसे आश्चर्यचकित कर देना चाहते थे। अब थीसिस छप गई है। वह शायद आज शाम तक आ भी जाएगी और विशाल की प्रतिज्ञा है कि थीसिस की पहली प्रति उसी व्यक्ति के हाथ में जाएगी जिसकी प्रेरणा उनके लिखने के पीछे है और जानती हो उस खूबसूरत-सी लड़की का क्या नाम है ? उसका नाम है रेखा !"

"यह सब झूठ है, सफेद झूठ। वीणा, मैं कहती हूं मुझे अकेली छोड़ दो। मैं तुम्हारी बातों से पागल हो जाऊंगी।" रेखा अपनी भरी-भरी आंखें लिए पलंग पर बैठी थी और वीणा की ओर अभ्यर्थना-भरी आंखों से देख रही थी।

"यह सब झूठ नहीं है रेखा। यह एकदम सच है और प्यार के ऐसे आदर्श दुनिया में मुश्किल से मिलते हैं। किसी खूबसूरत चेहरे को देखकर लार तो सबके मुंह से टपक जाती है और सब अपनी वफादारी की दुहाई देते हुए प्यार

का ढाल लिए खड़े हो जाते हैं पर ऐसा प्यार जिसमें प्रिय पात्र का नाम भगवान के नाम की तरह चौबीसों घण्टे जीभ पर रहे और उसकी मूर्ति भगवान की मूर्ति की तरह अन्तर् में प्रतिष्ठित हो जाए, कहां मिलता है? हमारे साहित्य में ऐसे ही प्यार को परमेश्वर का रूप माना गया है न कि राह चलते की आंख-मिचौनी और बसों और ट्रेन के डिब्बों की छेड़खानी को। मुझे तुम्हारे भाग्य से ईर्ष्या होती है।"

और रेखा ने सोचा वह कह दे कि मुझे तुम्हारे भाग्य से ईर्ष्या हो रही है और यह भी कि जिस लड़की का नाम लेकर विशाल की थीसिस लिखी गई है, वह रेखा नहीं वीणा है, पर वह अपने पर किसी प्रकार नियन्त्रण कर चुप रही। वीणा की बात समाप्त होते ही वह उठी और अन्दर के दरवाज़े से चौके में चली गई। रेखा का इस तरह चला जाना वीणा को बुरा लगा, पर यह सोचकर कि शायद रेखा किसी कारण से आज बहुत दु:खी है वह भी चुपचाप अपने घर चली आई।

सोलह

शरद का मन आज खिन्न था। रेखा को वीणा के यहां भेजे आज करीब एक सप्ताह हो रहा था और उसे इसका कुछ परिणाम नहीं दिखाई पड़ रहा था। अपने कमरे के दरवाज़े को अन्दर से बन्द कर वह उदास बैठा हुआ था कि दरवाज़े पर दस्तक हुई और जब उठकर उसने दरवाज़ा खोला तो वह आश्चर्यचकित हो गया। दरवाज़े पर रेखा खड़ी थी।

"आइए रेखा जी, मेरा इतना बड़ा सौभाग्य कि आप आज चौखट पर ही आ गईं।" शरद ने दरवाज़े से अपने को किनारे करते हुए कहा। रेखा का मन एक क्षण के लिए शरद की इस बात को सुनकर घृणा से भर गया, फिर भी यह अपने को नियन्त्रित कर बोली, "मैं आऊंगी पर आप प्रतिज्ञा कीजिए कि मेरे साथ किसी प्रकार का अन्यथा व्यवहार नहीं करेंगे।"

"मैं इतना नीच नहीं हूं रेखा, आप बेफिक्र होकर आइए। मुझे ऐसी कुछ शीघ्रता नहीं है।"

शरद की बात से वीणा कुछ आश्वस्त हुई और अन्दर आकर एक कुर्सी

पर बैठ गई। बैठते ही उसने आरम्भ किया—

"मिस्टर शरद ! मुझे आप यहां, इस समय देखकर आश्चर्य कर रहे होंगे पर मैं आज बहुत दुःखी हूं और जब मेरा दुःख मुझसे बर्दाश्त नहीं हुआ तब यहां तक आई हूं।" रेखा, यहां रुकी तो शरद ने अपने चेहरे पर कृत्रिम दुःख और गम्भीरता लाते हुए कहा, "कहते जाइए, मैं सब समझ रहा हू।"

"मुझे वीणा की बातों से कई बार ऐसा लगा था कि वीणा और विशाल मे जरूर प्यार है पर उसे मैं अपना भ्रम समझती थी। पर जब मैंने अपने कानों से विशाल और वीणा का प्रेमालाप सुना तो मुझे मालूम पड़ा कि मैं एक बार फिर छली गई।" इतना कहते-कहते रेखा की आखें भर आईं और अपने घुटनों पर सिर टेककर वह सिसकने लगी।

रेखा को रोते देख शरद अपनी जगह से उठा। उसने रेखा के सिर को उसके घुटनो से उठा दिया और इसके पहले कि वह कुछ बोले अपने रूमाल से उसके आंसुओं को पोंछ अपनी जगह पर आ बैठा। रेखा एक क्षण के लिए सन्न हो गई, पर फिर उसे लगा कि शरद के उस व्यवहार से उसे भीतर-भीतर खुशी ही हुई। उसे लगा कि विशाल के विश्वासघात के फलस्वरूप उसके दिल पर जो एक घाव-सा हो गया है उसपर शरद के व्यवहार ने हल्का मलहम लगा दिया है। अपने सिर पर शरद के हाथो के स्पर्श और फिर आसू पोंछते वक्त उसके मुह पर उसकी अंगुलियो के स्पर्श में रेखा को न जाने क्यों एक अपनत्व की भावना का अनुभव हुआ। थोड़ी देर के बाद वह अपने को संयत कर बोली—

"मिस्टर शरद, मैं आपसे कुछ प्रश्न पूछना चाहती हूं। क्या आप उनका ठीक-ठीक जवाब दीजिएगा ?"

"एकदम ठीक, आपको विश्वास नही हो तो कहिए मैं कौन-सी कसम खाऊं ?" शरद तपाक से बोला।

"नहीं, कसम खाने की आवश्यकता नहीं, पहले आप यह बतलाइए कि विशाल मुझे क्यों नही प्यार करते ?"

"मैं आपकी मजबूरी समझ रहा हूं मिस रेखा। हर प्यार करने वाले दिल की यही हालत होती है। इसका तो सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि यद्यपि आपने स्वयं ही विशाल और वीणा का प्रेमालाप सुना है, तब भी आप एक सप्ताह तक अपने को जब्त किए रही और अब भी आपकी आशा नहीं टूटती। मैं कहता हूं आप पहले यह बतलाइए, क्या वीणा आपसे हर तरह से अच्छी नहीं है ?"

"है।"

"क्या वह आपसे ज्यादा खूबसूरत नही है ?"

"है।"

"क्या वह आपसे पढ़ने में तेज नही है ?"

"है।"

"क्या जिस नाच-गान की प्रतियोगिता मे आप सेकंड-थर्ड रहती हैं उन्हीं में वह फर्स्ट नही रहती ?"

"रहती है।"

"तो क्या, ऐसी लडकी के रहते अगर विशाल जैसे व्यक्ति आपको प्यार करेंगे तो वे गलती नही करेंगे ?"

रेखा शरद के इस प्रश्न पर थोड़ी देर तक चुप रही फिर बोली—

"मिस्टर शरद ! तो क्या प्यार मात्र खरीद-बिक्री ही है ? यह तो ऐसा ही हुआ न कि यदि एक ही दाम पर अच्छी और बुरी दोनों चीजें मिलती हैं तो अच्छी को ही न लेकर बुरी क्यों ली जाय।"

"यह किसीके लिए हो चाहे न हो पर विशाल के लिए तो है।"

"क्यों ?"

"क्योंकि वे भावुक है और भावुक व्यक्ति एक से दूसरे पर और दूसरे से तीसरे पर फिसलता ही रहता है। और यह तो स्पष्ट ही हो गया कि वे कभी आपपर आए और जब आपसे भी अच्छी मिल गई तो उसपर चले गए।"

"पर मेरी समझ में यह नही आता कि विशाल जब वीणा को चाहते हैं तो फिर मुझपर भी अपना प्यार क्यों दर्शाते है। और फिर मेरे पास उनके पत्र लिखने का क्या प्रयोजन ?"

"वह इसलिए कि विशाल अपनी ही तरह वीणा को भी समझते हैं और उन्हें डर है कि कही उन्हीकी तरह वह एक से दूसरे पर आने वाली निकली तो वैसी स्थिति में वे आपका सहारा लेंगे। और जहां तक उनके पत्र भेजने का प्रश्न है, आप तो एक ही पत्र पर फूली नही समाती है, वीणा को तो ऐसे अनेक पत्र उनसे मिले हैं।"

"शरद !" रेखा चौंकी और तभी रेखा को एक बार वीणा का विशाल के हस्ताक्षर का पत्र देखते-देखते पहचान लेना और उसका कहना कि विशाल का हस्ताक्षर दो साल से उसके बक्से में कैद है, याद आया। उसकी आंखों में आंसू फिर भर आए और उसका दिल बैठने-बैठने सा लगा।

बड़ी मुश्किल से अपने को नियंत्रित कर वह बोली—

"पर शरद ! मेरी समझ में यह नही आता कि वीणा क्यों बार-बार मुझसे मेरे प्रति विशाल के प्यार की ही दुहाई देती है।"

"क्योंकि वह तुम्हें उल्लू बनाना चाहती है। क्योंकि, वह तुम्हारा ध्यान और साथ-साथ और लोगो का ध्यान भी अपने और विशाल के प्यार से खीचना चाहती है।"

शरद की यह बात रेखा को एकदम ठीक लगी और तभी उसे वीणा के द्वारा विशाल की थीसिस और लड़की की कही गई कहानी भी याद आई और उसने सोचा कि विशाल की थीसिस के पीछे निश्चय ही वीणा की ही प्रेरणा है। थीसिस की भूमिका आदि में किसीकी प्रेरणा आदि का उल्लेख होगा और अपनी बद-नामी से बचने के लिए वीणा रेखा के नाम पर कहानी गढ रही है। रेखा यही सोच रही थी कि शरद आगे बोला, "अच्छा रेखा एक बात पूछू ?"

"पूछिए।"

"विशाल ने कभी खुले दिल से तुमपर अपना प्यार प्रकट किया है ? मतलब उन्होंने कभी तुम्हें 'डार्लिंग', 'प्रिये' आदि नामों से पुकारा है ?"

"नही।" रेखा ने धीरे पर अत्यंत उदास स्वर में कहा।

"सच ?" शरद को जैसे आश्चर्य हुआ।

"हा।"

"इतने दिनों के प्यार मे उन्होंने कभी तुम्हारे हाथों को सहलाया या सिर थपथपाया या तुम्हारे एकाध लटों को अपनी उंगलियों मे सहेजा ?"

"नही।" और रेखा को लगा वह रो देगी।

"तो इसका मतलब तुमने समझा, रेखा ?"

"नही।" अबकी बार शरद की तरफ प्रश्न-मुद्रा मे देखते हुए रेखा ने कहा।

"इसका मतलब यह है कि ये सब वे वीणा के साथ करते आए है।"

"शरद !" रेखा को लगा उसका दिल बैठा जा रहा है।

"हां। रेखा, अपनी बुद्धि तो छोटी है और साथ ही अपने पास न तो डी० लिट० की डिग्री है न हमने कोई बहुत बड़ी थीसिस ही लिखी है, पर इतना तो कोई भी समझ सकता है कि प्यार केवल जबानी जमा-खर्च का नाम नही।"

"शरद ! मुझे भी यह बात खटकती रही है। मैंने एकाध बार अनजान बनकर अपना हाथ उनकी तरफ बढाया भी, पर उन्होंने उसे छुआ तक नही। मैंने समझा उनका प्यार आदर्शवादी है।" रेखा रोने-रोने को हो आई।

"खाक आदर्शवादी है।" शरद ने कहा।

"तुम जानती हो विशाल दार्जिलिंग से क्यों लौटे?" उसने आगे कहा।

"हां, मेरी चिट्ठी पाकर।" रेखा ने कहा।

"इसी मूर्खता पर तो मारी गई हो। वह तुम्हारी चिट्ठी पाकर नहीं, वीणा की चिट्ठी पाकर आए हैं।"

"मिस्टर शरद! ऐसा नहीं कहिए, मैं मर जाऊंगी।" रेखा इतने के लिए तैयार होकर नहीं आई थी और न उसे वीणा और विशाल के प्यार के इस हद तक जाने की आशा ही थी। उसने फिर भी साहस कर कहा—

"पर क्या इसका सबूत भी आपके पास है? आप आखिर इस निष्कर्ष पर कैसे पहुंचे?"

"सबूत चाहती हैं आप?" शरद थोड़ा मुसकराया, "पर उस सबूत को शायद आप सह नहीं सकेंगी। अच्छा ठहरिए।" इतना कहकर शरद उठा और उसने अपने बक्से से कागज का एक मुड़ा हुआ टुकड़ा निकाला और उसे रेखा की ओर बढ़ा दिया।

"माई गॉड!" कागज को खोलते ही रेखा चीख पड़ी, "यह तो वही चिट्ठी है जिसे मैंने विशाल को लिखी थी। आपने कहां पाया इसको?"

"हां, यह वही चिट्ठी है जो आपने विशाल को लिखी थी और जिसे वीणा ने मेरे सामने लिफाफे से निकालकर उसमें अपनी चिट्ठी भर दी थी और इसे रद्दी की टोकरी में डाल दिया था। आप तो जानती ही हैं, वह मेरी बहन लगती है, उसने मुझे अपने सिर की कसम दे दी और इसीलिए मैं आज तक इस घटना को छुपाए रहा।"

रेखा इस बात को सुनकर अपने को रोक न सकी और दोनों हाथों से अपने सीने को दबाकर घुटनों में अपना सिर दे सिसकने लगी। पर शरद बोलता गया, "आप समझती हैं मैं ही सबसे बुरा हूं। आप यह नहीं समझीं कि आप तो धोखेबाजों और छल करने वालों से घिरी हैं जो व्यर्थ ही मेरी शिकायत आपसे करते आ रहे हैं। मैं चाहे जितना बुरा रहा हूं, पर आपसे प्यार होने के बाद मैं एकदम बदल गया हूं। यही कारण है कि आपके बार-बार ठुकराए जाने के बाद भी मैं आज तक दौड़ता रहा। अगर मैं अब भी बुरा ही रहता तो कभी का आपको ठुकराकर किसी और के पास चला गया होता।

"रेखा, प्यार के बिना कोई नहीं रह सकता। न विशाल, न वीणा, न आप और न मैं। पर सबसे ज्यादा प्यार की आवश्यकता है आपको, क्योंकि आप टूटी हुई हैं और आपको लगातार धोखे पर धोखा मिला है। ऐसी हालत में मुझे भय

है कि यदि हम एक-दूसरे का सहारा नहीं बन जाते तो मैं फिसलूं या न फिसलूं आप जरूर फिसल जाइएगा।" इतना कहकर शरद उठा और रेखा के पास जाकर उसके सिर पर हाथ फेरते हुए बोला—

"रेखा डियर, तुम्हें इस तरह अधीर होने की आवश्यकता नहीं। हमने एक-दूसरे को एक बार प्यार किया है और हम एक-दूसरे के होने का स्वप्न भी देख चुके हैं। क्यों नहीं, अब हमेशा के लिए हम एक-दूसरे के हो जाएं और आप भी इस बार-बार की धमकी, धोखाधड़ी और छल-कपट से सदा के लिए मुक्ति पा जाएं ?"

रेखा के मन में इस समय हाहाकार मचा हुआ था। शरद का प्रस्ताव उसे बहुत ही अच्छा लगा और उसने तय किया कि अब सदा के लिए इस छल से छुट्टी पा जाने में ही कल्याण है। रेखा ने यह सोचकर आंसुओं से भीगी अपनी लाल-लाल आंखों को उठाया और शरद की आंखों में देखते हुए बोली—

'शरद डियर ! मुझे बचा लो।"

शरद जैसे इसी मौके की तलाश में था। उसने रेखा के सिर को अपनी भुजाओं में बांध लिया और धीरे से बोला, "रेखा, मैं तुम्हारा हूं, केवल तुम्हारा।"

रेखा ने इस समय कुछ सोचा और वह तेजी से शरद से छिटककर कोई दो हाथ की दूरी पर खड़ी हो गई। शरद एक क्षण के लिए भौचक्का हो, जहां का तहां बैठा रह गया।

"मिस्टर शरद ! मैं अब लड़कों के खेल में विश्वास नहीं करती। मैंने ऐसे बहुत खेल देखे और उनका पूरा फल भी भोगा है, यदि हम एक-दूसरे का बनना ही चाहते हैं तो हमें यह खेल बन्द कर कोई ठोस कदम उठाना चाहिए।" रेखा अपनी जगह से बोली।

"तुम्हारा मतलब ?" शरद अपनी जगह पर उठ खड़ा हुआ और वह रेखा की तरफ प्यार-भरी आंखों से देखते हुए बोला।

"मतलब कि हम विवाह कर लें।" रेखा ने जवाब दिया।

"वि······वा······ह !" शरद के मुख से नहीं चाहते हुए भी अनायास निकल गया।

"तुम्हें आश्चर्य हो रहा है ?" रेखा शायद शरद के चेहरे को पढ़ चुकी थी।

शरद अपने को संभालकर बोला, "नहीं, आश्चर्य की बात नहीं, मैं यह सोच रहा था कि यह कैसे होगा, आप बंगाली और मैं बिहारी। आप ब्राह्मण और मैं कायस्थ।

"तो क्या मेरे प्रति प्यार जताते वक्त और सदा के लिए एक होने की बात करते वक्त विवाह की बात आपके मन मे नही थी ?"

"थी, थी क्यों नहीं पर···मैं उसके इतने शीघ्र होने की संभावना पर नहीं सोच सका था।" शरद अपने चेहरे के भावों पर यथासाध्य नियंत्रण रखकर बोल गया।

"तो इसका मतलब यह कि आप विवाह के लिए प्रस्तुत नहीं है।" रेखा का स्वर गिर गया था। शरद उसे परख गया और बोला, "नहीं, ऐसी बात नहीं। मैं आपसे विवाह के लिए एकदम प्रस्तुत हूं, पर, मैं चाहता हूं कि आप रास्ता बतलाइए कि इसमें कैसे क्या हो सकता है ?"

"इसमें करना क्या है ? हम दोनों बालिग हैं और अपनी मर्जी से एक-दूसरे से शादी कर सकते हैं।" रेखा ने उत्तर दिया।

"पर मुझे भय लगता है।" शरद ने कहा

"डर किस बात का ?"

"आपके पिताजी का। वे बड़े आदमी है। मेरे पीछे पड़ गए तो मैं कहीं का न रहूंगा।"

"तो ऐसा कीजिए। हम लोग घर छोड़कर बाहर भाग जाएं और वहीं शादी कर लें।"

रेखा की बात सुनकर शरद का चेहरा चमक गया और वह बोला, "बहुत ठीक। यह प्रस्ताव बहुत अच्छा है, पर हमें इसमें शीघ्रता करनी चाहिए।"

"देखिए, मेरे पिताजी सोलह तारीख को सुबह एक महीने के लिए बाहर जा रहे हैं, आज तेरह तारीख है। 16 की रात के बारह बजे हम लोग कलकत्ता छोड़ दें, बाकी कार्यक्रम रास्ते में बनाएंगे। बोलो मंजूर ?"

"मंजूर," शरद ने कहा और थोड़ा पास सरककर उसने रेखा का हाथ पकड़कर दबा दिया। रेखा हाथ छुड़ाकर अलग हुई और बोली, "तो हमें फिर मिलने की आवश्यकता नहीं, हम दोनों 16 को बारह बजे प्लेटफार्म नम्बर चार पर मिल रहे हैं।"

"हां, मेरा विश्वास रखिए," शरद ने कहा, "मुझे आप ही से भय है।"

"लड़कियां शायद ही किसीको धोखा देती हैं मिस्टर शरद। धोखा देना लड़कों के ही पल्ले है। अच्छा तो मैं चली।" कहकर रेखा कमरे से बाहर हो गई।

शरद ने रेखा के जाते ही अन्दर से दरवाजा बंद किया और खिलखिला-

कर हंसा।

उसने सोचा यह सारी करामात उस चिट्ठी की है। यदि उस दिन डाकखाने में वीणा के नौकर द्वारा चिट्ठी छोड़ने के बाद वह डाक बाबू से चिट्ठी का पता बताकर, यह नहीं कहता कि वह चिट्ठी उसीकी छोडी हुई है और जिसके लिए वह चिट्ठी जा रही थी, वह लौट आया है और इस तरह वह लेटर बॉक्स से इसे निकलवा नहीं लेता तो आज बात नहीं बनती। उसने सोचा, उस समय तो उसने चिट्ठी निकालकर केवल विशाल को आने से रोकना चाहा था, पर उनका आना चाहे भले न रुका, पर संभालकर रखी इस चिट्ठी ने आज गजब कर दिया।

सत्तरह

विशाल जिस दिन सुधीर के यहां से यह कहकर लौटे थे कि वीणा के पिता उसका इन्तजार करते होंगे, उस दिन ठीक ही वीणा के पिता सुवर्णो, विशाल के ड्राइंगरूम में बैठे हुए थे। जाते ही विशाल ने डा० सुवर्णो को नमस्कार किया और उनके कष्ट करने का कारण पूछा।

"मैं आपके पास एक प्रार्थना करने आया हूं।" डा० सुवर्णो ने कहा। डा० सुवर्णो की यह बात सुनकर विशाल को कुछ शर्म अनुभव हुई और उसने कहा, "भला आपको मुझसे प्रार्थना क्या करनी है, आप तो आज्ञा दीजिए।"

"खैर, जो समझिए मुझे कहना यह है कि वीणा को तो आप जानते ही होंगे। उसका यह अन्तिम वर्ष है और उसने आपके ही विषय में ऑनर्स ले रखा है। वह पढ़ने में अच्छी है और मैं चाहता हूं कि आप उसे कुछ सहायता कर देते तो उसको ऑनर्स में अच्छा क्लास आ जाता।"

डा० सुवर्णो की बात सुन विशाल को लगा कि वह बहुत बड़े धर्म-संकट में पड़ गए। वह लड़कियों की प्रकृति से परिचित थे तथा साथ ही यह भी जानते थे कि रेखा को वीणा के प्रति सन्देह है। ऐसी स्थिति में उन्हें वीणा को पढ़ाने के लिए स्वीकृति देना खतरे से खाली नहीं नजर आया। साथ ही डा० सुवर्णो के लिए उनके दिल में काफी श्रद्धा थी और एक बुजुर्ग का दिल तोड़ना विशाल के समान व्यक्ति के लिए कठिन था। वह बड़े पसोपेश में पड़े और उनसे न हां

यहते बना न ना। उन्हें असमंजस में पड़े देख डा० सुवर्णो आगे बोले, "मैं जानता हूं कि आप अध्ययनशील व्यक्ति हैं और आपके पास समय का अभाव है फिर भी मैं आपसे वीणा के लिए नियमित रूप से केवल एक घंटा समय मागता हूं। मेरी गाड़ी रोज आपको लेने के लिए आ जाएगी। इस सेवा के बदले में आपको दे क्या सकता हूं, फिर भी आप मुझसे बहुत छोटे हैं और मेरे लड़के के समान हैं, अतः मैं जो कुछ आशीर्वाद के रूप में देना चाहूं आपको स्वीकार करना पड़ेगा।"

विशाल को डा० सुवर्णो की यह बात सुनकर कुछ मौका मिला और उन्होने कहा, "डाक्टर साहब, वैसे तो आपकी आज्ञा सिर माथे पर, पर मैं ट्यूशन नहीं करता और अच्छा हो आप मेरे विभाग के किसी दूसरे व्यक्ति को पकड़ लें!"

"आपने शायद मुझे गलत समझा," डा० सुवर्णो ने कहा, "मैं ट्यूशन की बात नही करता। मैं तो किसी शर्त पर आपसे वीणा के लिए कुछ समय लेना चाहता हूं और समय तो हर किसीका कीमती होता है, इसलिए मैं आपको कुछ देना चाहता था, दूसरे मेरी तनख्वाह भी आपसे ज्यादा है, अत. आपको कुछ दे देना मेरा फर्ज ही होगा। रही बात दूसरे की, तो स्पष्ट बात यह है कि वीणा किसी दूसरे से पढ़ना ही नही चाहती। वह कहती है कि सिवा आपके कोई उसकी सहायता नही कर सकता।"

डा० सुवर्णो की बात सुन विशाल बहुत असमंजस में पडे और फिर कुछ सोचकर बोले, "अच्छा, मुझे सोचने के लिए थोड़ा समय दीजिए। मैं आपको कल बतलाऊंगा।"

"ठीक है, इस समय जाता हूं, पर सुबह मैं फिर आऊंगा और आशा है आप कल मुझे निराश नहीं करेंगे। वीणा तो आपकी स्टूडेन्ट ही है, यदि आपके रहते उसको कुछ लाभ हो जाए तो क्या बुरा हो!"

इतना कहकर डा० सुवर्णो चले गए थे और विशाल दौड़ा-दौड़ा सुधीर के यहां गया था।

"सुधीर गजब हो गया।" सुधीर के पास पहुंचते ही वह बोला था।

"क्या हुआ? रेखा तुम्हारे यहां डेरा-डंडा लेकर आ गई क्या?" सुधीर विशाल की परेशानी को जान-बूझकर उपेक्षित कर बोला।

"नही यार, तुमको तो मजाक ही सूझता है। मैं कहता हूं कि डा० सुवर्णो आए थे।"

"तो इसमें परेशान होने की क्या बात है? डा० सुवर्णो ही तो आए थे कोई

पहाड़ तो नहीं टूट पड़ा था !"

"तुम तो यार कभी किसी बात को सीरियसली लेते नहीं। मैं कहता हूं, आगे भी तो सुनो।"

"सुनाओ भी तो। तुम तो डा० सुवर्णो के आने से परेशान हो गए। कहीं रेखा के पिता सुशान्त वन्द्योपाध्याय पहुंचते तब तो तुम्हारी सिटी-पिटी ही बन्द हो जाती।"

"फिर वही मजाक। यहां तो मैं मुसीबत में फंसा हूं और तुम्हें हंसी सूझ रही है। जानते हो वह वीणा को पढ़ाने की बात कह रहे थे।" विशाल परेशान मुद्रा में बोला।

"ओ यह बात है। तब तो यार दोनों हाथों में लड्डू हैं। हां यार, किस्मत वाले हो। भगवान देता है तो छप्पर फाड़कर।" कहकर सुधीर हंसने लगा।

"सुधीर ! मैं तुम्हारे सामने मजाक की बातें सुनने नहीं आया। मैं तुमसे अपनी समस्या के समाधान में सहायता के लिए आया हूं।" विशाल के चेहरे पर खीझ उभर आई थी।

"अच्छा बोलो, मैं तुम्हारी क्या सहायता कर सकता हूं ?" सुधीर अब गम्भीर होकर बोला।

"मैं वीणा को पढ़ाने जाना नहीं चाहता।"

"यह तो मैं जानता हूं। हुजूर तो भीगी बिल्ली हैं। डर है कि वीणा के पढ़ाने से कहीं रेखा धता न बता दे।"

"तुम चाहे जो मतलब निकालो, पर यह बात सही है कि मैं रेखा के दिल को जरा भी ठेस पहुंचाना नहीं चाहता।"

"मैं समझ गया।" सुधीर ने कहा, "पर मैं तुमसे एकाध प्रश्न पूछता हूं।"

"पूछो।"

"डा० सुवर्णो तुम्हें क्या देंगे ?"

"उन्होंने कुछ खोलकर तो कहा नहीं, पर चार सौ से कम क्या देंगे ?"

"कितने घंटे पढ़ाने की बात है ?"

"एक घंटा।"

"कॉलेज में तुम्हें क्या मिलता है ?"

"सात सौ।"

"कितने घंटे तुम पढ़ाते हो ?"

"कोई तीन घंटे।"

"तो बोलो डा० सुवर्णो का सौदा महंगा है या सस्ता ?"

"पर तुम प्यार को मुद्रा के मापदंड से क्यों मापते हो ?" विशाल ने कहा, "मैं चार सौ क्या चार हजार रुपये के लिए भी अपने प्यार का सौदा नहीं कर सकता।"

"पर इससे तुम्हारे प्यार पर कौन-सा वज्रपात हो रहा है ?" सुधीर ने कुछ खीझकर कहा।

"अगर रेखा जान गई तो ?"

"जान जाएगी तो कौन-सा आसमान टूट पड़ेगा। उसके तो जानने की ही बात है। और तुम लाख सिर पटकते रह गए और वह तुम्हारे कहने के अनुसार प्रो० शर्मा से न पढ़कर प्रो० मुखर्जी से अंग्रेजी पढ़ने लगी, तो तुमने क्या उसे प्यार करना छोड़ दिया ?"

"मेरी तो दूसरी बात है। मैं उससे ज्यादा समझदार हूं।"

"वह भी समझदार है। इक्कीस साल की लड़की पच्चीस साल के लड़के से ज्यादा खोपड़ी रखती है। उसको इतनी-सी बात समझ में आ जाएगी कि जब विशाल ने उसके प्रो० मुखर्जी से पढ़ने का बुरा नहीं माना तो उसे भी उनका वीणा को पढ़ाना बुरा नहीं लगना चाहिए।"

"तुम्हारी बात तो कुछ हद तक ठीक मालूम पड़ती है।" विशाल ने कुछ सोचकर कहा।

"कुछ हद तक ठीक नहीं बिल्कुल ठीक है।" सुधीर ने जवाब दिया, "और दूसरी बात यह कि तुम्हें डा० सुवर्णो का भी तो मुंह देखना है, ये वृद्ध आदमी हैं। साथ ही तुम्हारे पिता से उनकी पुरानी जान-पहचान है।"

"यह तो ठीक कहते हो, कुछ रोज पहले जब मेरे पिताजी कलकत्ते आए थे तो उनसे शायद डा० सुवर्णो कुछ इस तरह की बात बोले भी थे। पिताजी ने मुझे कुछ इशारा किया था पर मैंने इनकार कर दिया था। डा० सुवर्णो शायद उन्हींके कहने पर अब तक चुप थे। पर वीणा ने शायद फिर जोर लगाया होगा और तब डा० सुवर्णो को लाचार हो मेरे पास आना पड़ा।"

"इसीलिए तो कहता हूं कि तुम आंखें मूंदकर वीणा को पढ़ाओ। इसमें खतरे की कोई बात नहीं।" सुधीर ने हामी भरी।

दूसरे दिन जब डा० सुवर्णो मिलने आए तो विशाल ने उन्हें स्वीकृति दे दी। उस दिन रविवार था और विशाल खाली थे, इसलिए डा० सुवर्णो ने दिन के

कोई साढ़ आठ बजे उनके लिए गाड़ी भिजवा दी और विशाल वीणा के घर चल दिए।

विशाल को लेकर गाड़ी जैसे ही वीणा के फाटक पर रुकी और विशाल जैसे ही गाड़ी से निकले, शरद ने, जो उसी समय उस सड़क से गुजर रहा था विशाल को देख लिया। वह अपनी जगह पर खड़ा हो गया और जब विशाल अन्दर चले गए तो उसने ड्राइवर के पास जाकर पूछा "तुम जानते हो प्रोफेसर साहब यहां क्यों आए हैं ?"

"हां, बिटिया रानी को पढ़ाने के लिए डाक्टर साहब ने उन्हें बुलाया है।"

"ओ !" शरद के मुख से आनन्द की एक चीख निकल गई और वह रेखा के घर की ओर दौड़ गया।

विशाल गाड़ी से उतरकर जब डा० सुवर्णो के मकान के अन्दर गए तब डा० सुवर्णो उन्हें अपने ड्राइंगरूम में ही मिले। वे कहीं जाने के लिए तैयार बैठे थे। विशाल को देखते वे बोले, "आप वीणा की 'स्टडी' में ही चले जाइए। मैं एक आवश्यक काम से बाहर जा रहा हूं और मैं समझता हूं आपकी पढ़ाई समाप्त होते-होते लौट आऊंगा। मेरे आने पर मेरा ड्राइवर आपको छोड़ आएगा।" इसके बाद डा० सुवर्णो ने एक नौकर से विशाल को वीणा की स्टडी में भेज दिया।

वीणा पहले से ही अपनी स्टडी में बैठी थी। विशाल को देखकर वह बहुत प्रसन्न हुई और देखते ही उठ खड़ी हुई। उन्हें हाथ जोड़कर नमस्कार किया और जब वे बैठ गए तो टेबल की दूसरी तरफ की कुर्सी पर बैठते हुए बोली—

"सुना है सर, आप मुझे पढ़ाने को प्रस्तुत नहीं हो रहे थे ?"

"हां।" विशाल ने कहा, "और उसके कई एक कारण थे और इनमें जो प्रमुख है उसे या तो केवल तुम जानती हो या मैं।"

"ओह ! तो यह बात थी सर ! पर वह बात तो बहुत पुरानी हुई और मुझे उम्मीद थी उस दिन के बाद से मुझमें हुए आकस्मिक परिवर्तन को देखकर आपको मुझपर कोई सन्देह नहीं रहा होगा।"

"सन्देह तो नहीं था फिर भी भय था कि पुराना घाव फिर हरा हो जाय," विशाल ने टेबुल पर पड़ी एक पुस्तक के पन्ने उलटते हुए कहा, "और हां, मेरी यह प्रतिज्ञा है कि मैं अपने जानते किसी गैर लड़की का हाथ भी नहीं स्पर्श करूंगा और न कोई ऐसी बात करूंगा जिसका सम्बन्ध प्यार या ऐसी ही किसी चीज से

हो। मुझे आशा है मुझसे पढ़ते समय आप मेरी प्रतिज्ञा पर ध्यान रखेंगी।"

विशाल की बात सुन वीणा की आंखों में अनायास आंसू छलक आए जिन्हें वह लाख चाहने पर भी रोक न सकी और फिर उसने बड़े संयत स्वर में कहा, "जहां तक घाव का प्रश्न है सर! वह चाहे भरा हो या नहीं, पर आपकी लिखी चिट्ठी अब भी मेरे बक्से में सुरक्षित है और जब कभी मेरा मन डिगने को होता है, मैं उसे एक बार पढ़ लेती हूं और फिर? फिर मैं चट्टान बन जाती हूं, नीरस और सख्त। रही बात आपकी प्रतिज्ञा की, तो आप यह भी विश्वास मानिए कि मैं ऐसी कोई भी हरकत नहीं करूंगी जिससे आपकी प्रतिज्ञा भंग हो। बीच में पड़ा यह टेबुल हमेशा आपके और मेरे बीच दीवार बनकर रहेगा और कम से कम इस टेबुल भर की दूरी आपके और मेरे बीच जिन्दगी-भर बनी होगी।

"आप औरत के दिल को नहीं जानते सर! यदि वह मोम के समान कोमल है तो पत्थर के समान कठोर भी। एक बार जब वह किसी के दरवाजे से दुत्कार दी जाती है तो वह फिर भर जाती है पर उसके यहां अपना आंचल पसारने नहीं जाती। यदि औरत के दिल में भावनाओं और अरमानों की अथाह बाढ़ होती है तो औरत अवसर पड़ने पर इस बाढ़ को अपने दिल में ही कैद कर स्वयं ही उसे पी जाना भी जानती है। औरत को आप कमजोर मत मानिए सर! वह आप लोगों की भाषा में अबला हो सकती है पर उसमें इतना बल अवश्य है कि अनावश्यक जज्बातों की वह अपने दिल के अन्दर ही होली जला दे और उफ तक न करे।"

वीणा की इन बातों को सुनकर विशाल को लगा वे रो देंगे। उनका दिल एकदम मुंह को आ गया। वे सोच रहे थे अपने कानों में अंगुली डाल लें या उठकर वहां से भाग जाएं। पर दोनों में वह कुछ न कर सके और सिर झुकाए अपनी जगह पर बैठे रहे।

"प्रतिज्ञा की बात आपने खूब याद दिलाई सर!" वीणा आगे बोलती गई, "आपके पत्र को प्राप्त करने के बाद मैंने भी एक प्रतिज्ञा की है, जो समय आने पर शायद आपको भी मालूम हो जाय! पर मैं एक बात और कहूंगी। रेखा, मेरी दोस्त है और मैं उसे छोटी बहन की तरह मानती हूं। जैसे ही मुझे मालूम हो गया कि आपको रेखा से प्यार है, वैसे ही मैं रेखा के दिल में आपके प्रति ज्यादा से ज्यादा प्यार जगाने की कोशिश करने लगी। कई बार उसने मुझसे कहा कि मैं ही विशाल से प्यार क्यों नहीं करती, पर मैंने असली बात छिपा ली

ग्रौर उसे कुछ उलटा-सीधा समझा दिया। ग्रौर हमेशा यह प्रयत्न करती रही कि वह सभी को भूलकर ग्रापकी पूर्णतया ग्रपना ले।"

"वीणा, तुम देवी हो!" विशाल के मुह से ग्रनायास ये शब्द निकल पड़े ग्रौर उनकी ग्रांखों से दो बूंदें निकल सामने के टेबुल पर टप-टप गिर पड़ीं। पर वीणा ने उधर ध्यान नहीं दिया ग्रौर बोलती गई, "पर मुझे एक बात ग्रौर कहनी है। मेरे प्रयत्नों के फलस्वरूप रेखा के दिल में ग्रापके प्रति ग्रब पर्याप्त प्यार जग ग्राया है ग्रौर मैं ग्रब यह जानना चाहती हूं कि क्या दार्जिलिंग से लौटने के बाद भी ग्राप रेखा से उतना ही प्यार करते है?"

"हां," विशाल ने बहुत कठिनाई से ग्रपने को नियंत्रित कर उत्तर दिया था। इसके बाद वीणा एक क्षण के लिए चुप हो गई थी ग्रौर ठीक उसी समय शरद के द्वारा भेजी गई रेखा वीणा के कमरे के पीछे की खिड़की के नीचे ग्राकर खड़ी हो गई थी। शरद ने तो उसे यह सोचकर भेजा था कि विशाल को वीणा के यहां देखते मात्र ही रेखा ग्रागबबूला होकर लौट ग्राएगी ग्रौर उसका कार्य बढ जाएगा। पर रेखा के द्वारा खिड़की के नीचे पहुंचकर वीणा ग्रौर विशाल की बात सुन लेने से शरद को लाभ ही हुग्रा। रेखा के, खिड़की के नीचे खड़ी होने के एक क्षण बाद की वीणा ने ग्रागे पूछा था, "तो इसका मतलब यह कि ग्रापका प्यार ग्राज भी पहले ही के तरह है। इसमें रत्ती मात्र भी कमी नहीं ग्राई है।'

"वीणा, तुम्हें मुझपर सन्देह नहीं होना चाहिए। मेरा प्यार पहले जितना था उससे ग्राज जरा भी कम नहीं है।" विशाल ने जवाब दिया था ग्रौर रेखा इसके बाद वहां नहीं ठहर सकी थी।

"मुझे ग्रापसे एक प्रार्थना करनी है," वीणा ने, ग्रागे कहा था, "रेखा एक बहुत ही भावुक लड़की है। मैं नहीं समझती उसका दिल इतना कोमल क्यों है। जरा-जरा-सी बात उसको लग जाती है। उसकी ग्रांखों में ग्रांसू ग्राते तो देर नहीं लगती। चोट लगने पर वह खाना तक नहीं खा पाती ग्रौर रोती रहती है। दार्जिलिंग जाने से पूर्व ग्रापने एक बार एक एकस्ट्रा क्लास लिया था ग्रौर उसमें वह नहीं ग्राई थी, दूसरे दिन किसीने उससे कहा कि विशाल कह रहे थे कि रेखा को मेरा नोट नहीं देना क्योंकि वह क्लास नहीं करती ग्रौर पढ़ाई पर ध्यान नहीं देती। इतना सुनकर ही वह रोने लगी थी ग्रौर उस दिन पहले घंटे के बाद ही पूरे दिन का क्लास छोड़कर भाग गई थी। इसीलिए, मुझे कहना है कि ग्राप उसकी भावनाग्रों का ध्यान रखिएगा ग्रौर कोई ऐसी बात नहीं कीजिएगा

जिससे उसे तकलीफ हो। बेचारी का अब तक का जीवन तो प्रायः रोते ही बीता है।"

"मेरी तरफ से निश्चिन्त रहो वीणा। यह तो तुम्हें बताने की आवश्यकता नहीं कि मैं रेखा को अपने पूरे दिल से चाहता हूं, मैं कभी भी जान-बूझकर उसे तकलीफ नहीं दे सकता। पर तुम एक काम करना। तुम रेखा से यह न बतलाना कि मैं तुम्हें पढ़ा रहा हूं। अगर, उसे अपने ही पता लग गया देखा तो जाएगा। यद्यपि रेखा तुम्हारी दोस्त है, पर हो सकता है मेरा तुमसे मिलना उसे बुरा लगे।"

"ठीक है, मैं नहीं कहूंगी।"

विशाल ने आगे वीणा को अपनी थीसिस की बात बताई थी और वे सारी बातें जो वीणा ने रेखा से कही थीं। विशाल के मना करने के कारण उसने उस समय उनका नाम नहीं लिया था और न रेखा ने अपने क्रोध में पूछा ही था कि वीणा को ये बातें कैसे ज्ञात हुई।

अठारह

रेखा शरद के यहां से लौटी तो देखा विशाल बरामदे में एक कुर्सी पर बैठे हैं। विशाल को देखते ही उसके मन में घृणा का ज्वार उमड़ा और उसने न तो उनकी तरफ मुड़कर देखा ही और न उन्हें नमस्कार ही किया। वह सीधे अपने मकान के अन्दर घुस गई। उसे लगा कि यदि उस समय विशाल कुछ बोलते तो वह सारे अनुशासन को भूलकर उन्हें जली-कटी सुना देती।

अन्दर जाने पर रेखा के पिताजी, शायद अभी-अभी बरामदे से लौटे थे, रेखा के हाथ में एक किताब देते हुए बोले—

"कतो सुन्दर बोई" (देख तो कैसी सुन्दर किताब है।)

रेखा ने जल्दी में कुछ समझा नहीं और किताब को हाथ में लेते ही जब उसकी नजर, उसके मुख-पृष्ठ पर गई तो देखा लेखक की जगह लिखा था—विशाल एम० ए०, डी० लिट्०। उसका मन झल्ला गया और उसके दिल में आया कि किताब को उठाकर दरवाजे के रास्ते सीधे बाहर फेंक दे। वह शायद अपने विचार को कार्य-रूप में परिणत भी कर देती, पर तभी उसे एक बात

याद आई। उसने किताब को खोला और उसकी भूमिका पढने लगी। भूमिका के बीच मे उसे एक जगह मिला, "मेरे अनुसन्धान का विषय आकस्मिक रूप में नही निश्चित किया गया। एक बार मैं अपने एक अत्यन्त प्रिय व्यक्ति के साथ अरविन्द के सिद्धान्तों पर चर्चा कर रहा था। बातचीत के सम्बन्ध मे उसने सुझाव दिया कि आत्मा-परमात्मा सम्बन्धी अरविन्द के कुछ सिद्धान्त अनुसन्धान के अच्छे विषय हो सकते हैं और मैंने निश्चित कर लिया कि मेरे अनुसन्धान का आधार कुछ ऐसा ही होगा...... "

भूमिका के इस अंश को पढकर रेखा को लगा कि कभी अरविन्द के बारे मे विशाल ने उससे बातें चलाई थी और उसने यह उनसे कहा भी था कि यह अनुसंधान का अच्छा विषय हो सकता है, पर इससे ज्यादा उसे कुछ याद नही आया। उसे यह भी समझ में नही आया कि उसके चलते उन्हे अनुसंधान के शीघ्र और आसानी से समाप्त होने मे क्या सहायता मिली होगी। तभी उसे वीणा की यह बात याद आई कि विशाल की थीसिस की हर पंक्ति और हर अक्षर में किसी लड़की का नाम सना है। रेखा ने एक मिनट के लिए सोचा कि हो सकता है वही (रेखा) इस पुस्तक की प्रेरणा के मूल में हो और इस तरह वह विशाल की थीसिस की शीघ्र समाप्ति में सहायक हो। पर, तभी उसे लगा कि अगर यह बात है तो वीणा को ही यह बात पहले कैसे मालूम हुई। इसका मतलब स्पष्ट है कि वीणा ही इस थीसिस की प्रेरणा रही है और उसी-का नाम इस थीसिस के हर अक्षर के साथ सना है। मस्तिष्क मे यह विचार आते ही रेखा का मन घृणा और क्रोध से भर गया और उसने किताब को उठाकर कमरे मे रखे एक टेबुल पर फेंक दिया। उसके पिताजी उसे पुस्तक उलटते देख अभी वही खड़े थे। रेखा को पुस्तक फेंकते देख पूछ बैठे, "बोई भालो नेई कि ?" (किताब अच्छी नही है क्या ?)

"अभी बूझते पारि ना।" (मेरी समझ मे नही आ रहा है) और रेखा के अन्दर जाते ही उसके पिता भी उसके पीछे-पीछे चले गए और उसके नजदीक जाकर पूछा, "प्रोफेसर साहब एसेछेन, तुमि दारवा नेई कोरबे कि ?" (प्रोफेसर साहब आए हैं तुम भेंट नही करोगी क्या ?)

"नेई, दारवा कोरबो, ना।" (नही भेंट नही करूंगी) रेखा ने जवाब दिया। रेखा का जवाब सुनकर उसके पिता बाहर चले आए और विशाल के पास बैठते हुए बोले, "आपनि, मेरा मतलब आप उसे कुछ बोले थे क्या ?"

"नहीं तो ! क्यों ?" विशाल ने आश्चर्य से पूछा।

"कुछ नहीं ! ओर मनवोधा भालो नेई।" (उसकी तबीयत शायद अच्छी नहीं है)

"पर हुआ क्या ?" विशाल कुछ समझ नहीं पा रहे थे।

"कुछ हुआ नहीं। आपकी किताब उसने फेंक दी। आर, आमि बोललाम जे दाखा कोरो तो बोली कि मैं भेंट नहीं करूंगी।"

विशाल को रेखा के पिता की बात सुनकर बहुत आश्चर्य हुआ। वे बहुत अरमान से अपनी थीसिस की पहली प्रति रेखा के यहां लाए थे। उनका यह प्रबंध था कि किताब की एक कापी जब रेखा के यहां पहुंच जाए उसके बाद ही वह किसी दूसरे को मिले अथवा बिक्री के लिए दुकान में जाय। रेखा के पिता का यह कहना कि रेखा ने किताब फेंक दी, विशाल का दिल तोड़ गया और उनकी आंखों में आंसू छलक आए, जिन्हें अंधकार के कारण रेखा के पिता नहीं देख सके। विशाल के लिए वहां अब एक क्षण भी रुकना कठिन हो गया और वे रेखा के पिता से विदा ले वहां से चल दिए।

उन्नीस

वीणा अपने स्टडी-टेबुल पर बैठकर एक पुस्तक खोलकर उसकी एकाध पंक्ति ही देख पाई थी कि कॉल-बेल बज उठी। इतना सवेरे कौन ? उसने सोचा और फिर उठकर दरवाजा खोल दिया।

"आप ? इतनी सवेरे ?" वीणा ने आश्चर्य से पूछा।

"हां, मैं बहुत तकलीफ में हूं वीणा !" विशाल ने जवाब दिया।

"यह तो आपके चेहरे से ही लगता है। मालूम होता है कि आप रात-भर सोए नहीं।" वीणा ने विशाल को बैठने के लिए एक कुर्सी देते हुए कहा।

"हां वीणा, मैं रात-भर सोया नहीं और जिन्दगी की सारी रातें शायद अब ऐसे ही बीतेंगी।" विशाल ने एक लम्बी सांस खींचते हुए कहा और उसके बाद उन्होंने रेखा के यहां की पूरी घटना बता दी।

"डा० साहब, मैं एक बात पूछूं ?" वीणा ने गम्भीर होकर कहा।

"पूछो, पर यह समझ लो कि मेरी मानसिक स्थिति कुछ ऐसी नहीं है कि मैं किसी गम्भीर समस्या पर अपनी राय दे सकूं।"

"कोई गम्भीर समस्या नहीं, यह आपसे ही सम्बन्धित एक बात है, मैं यह पूछना चाहती थी कि क्या यह उचित है कि हम अपनी भावनाओं को इतनी स्वतन्त्रता प्रदान कर दें कि वे हमारी सभी सम्भावनाओं को ही स्वाह कर जाएं ? क्या भावुकता को व्यक्ति की कर्तव्य-बुद्धि पर इस तरह हावी होने की छूट होनी चाहिए कि व्यक्ति सदा के लिए समाप्त हो जाए ? डाक्टर साहब, मैं पूछना चाहती हूं कि मनुष्य, जो विश्व के ढेर सारे ज्ञान पर अधिकार रखने की हामी भरता है, जो प्रकृति की अनेक प्रबल शक्तियों पर नियन्त्रण प्राप्त कर अपने को सृष्टि का सर्वोत्तम प्राणी सिद्ध कर चुका है, वह जहां अपने ऊपर अधिकार की बात आती है, जहां निजी भावनाओं को नियन्त्रित करने की आवश्यकता होती है, वहां इस तरह लाचार और दीन है ?"

"बस करो वीणा, बस," विशाल ने उसे बीच में ही टोका, "मैं तुम्हारी बातों को समझ गया। रेखा के प्रति मेरे प्यार के पीछे तुम्हें मेरे विनाश की सम्भावना दीखती है और तुम्हें लगता है कि यह प्यार-भावना मुझे कर्तव्यच्युत और अंततः अकर्मण्य भी बना सकती है। तुम्हारा मंतव्य यह भी है कि मनुष्य को अपनी भावनाओं को उच्छृंखल नहीं होने देना चाहिए और अपनी भावुकता पर पर्याप्त नियन्त्रण रखना चाहिए। मैं तुम्हारी सारी बातों से सहमत हूं वीणा, पर मुझे इस सम्बन्ध में केवल एकाध बातें ही स्पष्ट करनी हैं। पहली बात तो यह है कि जहां तक प्यार के विनाशकारी पक्ष का सम्बन्ध है, मैं यह मानता हूं कि वह इस बात पर आश्रित है कि हम प्यार का प्रयोग कैसे करते हैं। दूसरे शब्दों में हम यह भी कह सकते हैं कि अपने प्रिय-पात्र के के प्रति हमारे अन्तर् में जो स्निग्ध भावना पैदा होती है आखिर उसका लक्ष्य क्या है। ओछे उद्देश्यों की उपलब्धि, अथवा कुत्सित इच्छाओं की पूर्ति मात्र से सम्बन्धित प्यार निश्चित रूप से पतन की राह का प्रतीक है, पर जहां सृजन और उत्थान ही प्यार-भावना का लक्ष्य है वहां विनाश का प्रश्न ही नहीं उठता। मैं समझता हूं कि तुम्हारा भ्रम मेरी यदा-कदा की असंतुलित मानसिक स्थिति को लेकर है। मैं इसे स्वीकार करता हूं कि गत एक साल से मैंने कर्तव्य को प्रायः किनारे कर दिया है और भावनाओं की बाढ़ ने मुझे इस तरह बहाया है कि मैं अगर अकर्मण्य नहीं रहा तो मैंने अपने निर्माण की राह में भी इधर कोई ठोस कदम नहीं उठाया है। पर इसका कारण भी तुम जानती हो, यह सब प्यार के उस पक्ष के फलस्वरूप हुआ है जिसे तुम उसका सबसे अंधकार-युक्त पक्ष कह सकती हो। विशुद्ध और सच्चा प्यार तो वीणा, सदा ही मंगल-

कारी और शुभ है, पर जहां प्यार के अमृत को, उपेक्षा के हलाहल का सामना करना पड़ता है वहां प्यार की सर्जक शक्तियों का तो दम घुट जाता है और उसकी विनाशकारी शक्तियां प्रबल हो जाती हैं। मैं ऐसी ही स्थिति से गुजर रहा हूं वीणा।

"जब तक रेखा का निश्छल और सच्चा प्यार मिलता रहा तब तक तो मैं निर्माण की सीढ़ी पर सीढ़ी नित्य, नवस्फूर्ति और नये उल्लास से चढ़ता गया। परन्तु जब से रेखा शरद के चक्कर में आकर मेरी उपेक्षा कर रही है, तब से ही मुझे प्यार के अनिष्टकर पक्ष का सामना करना पड़ रहा है। यह तो तुममें मैं बतला ही चुका हूं कि किस तरह मेरी इधर की सारी उपलब्धियों के पीछे रेखा का प्यार ही था। अतः मेरे कहने का तात्पर्य है वीणा कि किसी-को प्यार करना कभी भी भावनाओं को वह उन्मुक्तता और स्वतन्त्रता प्रदान करना नहीं है जो व्यक्ति की संभावनाओं की ही हत्या कर दें।

"तुम्हारा दूसरा प्रश्न मानवीय भावनाओं के नियंत्रण से सम्बन्धित है। तुम्हारे कहने का मतलब शायद यही है कि हम में क्या इतनी शक्ति नहीं है कि हम प्यार और भावनाओं के चक्कर में न पड़, अपने कर्तव्यों को यों ही निभाते चलें। तो यहां मुझे तुम्हारे प्रश्न का उत्तर देने में कठिनाई हो रही है। पहली बात तो यह है मेरे कि ख्याल से प्यार की प्रेरणा के अभाव में जो कर्तव्य होगा, वह मात्र कर्तव्य निर्वाह ही होगा। तात्पर्य यह कि ऐसी स्थिति में, हम, जो कुछ सीधे साधे रूप में हमारा उत्तरदायित्व रहता है—उसे ही निभाकर अपनी कर्तव्य-बुद्धि को संतुष्ट कर लेते है। ऐसी स्थिति महत्त्वाकांक्षा के अभाव की होती है और हम अपने लिए किसी महान् कर्तव्य को नहीं चुन पाते। न हम अपना लक्ष्य किसी ऊंची जगह पर प्रतिष्ठित कर पाते हैं। तो मेरे ख्याल से प्यार की पीड़ाओं के भय से महत्त्वाकांक्षा-विहीन हो समान मनुष्यों की जिन्दगी जीना कोई बुद्धिमानी नहीं।"

"तो आपके अनुसार प्यार बिना प्रगति असंभव है।"

"हां, पर प्यार से मेरा मतलब फिर सच्चे और आदर्श प्यार से है, आज-कल की सस्ती भावुकता और कृत्रिम प्रदर्शन से नहीं।"

"ठीक है सर, भगवान आपकी मदद करे।"

"ठीक है वीणा, मैं अभी चलूंगा। मैं अशांत हूं, जरा सुधीर से भी मिल लूं।"

बीस

"यह क्या शक्ल बना रखी है तूने ?" विशाल वीणा के यहां से लौटे तो सुधीर बैठा प्रतीक्षा कर रहा था।

"मतलब ?" विशाल ने चेहरे पर बनावटी गम्भीरता लाते हुए कहा।

"मतलब कि शीशा देखा है।"

"वह तो सवेरे ही देखा है।"

"हां तो उस समय सात बजे होंगे, अभी तो पूरे बारह बज रहे हैं।"

"क्या बकते हो ? अभी तो साढ़े दस बजे हैं।" विशाल ने अनजान बनते हुए कहा।

"अरे यार घड़ी में तो साढ़े दस बज रहे हैं। मेरा मतलब तो तुम्हारे चेहरे से है।" सुधीर ने थोड़ा मुस्कराते हुए कहा।

"चेहरे की बात बोलते हो," विशाल बैठते हुए बोले, "यहां पता है, पेट में चूहे कूद रहे हैं।"

"क्यों ?"

"रात कुछ खाया नहीं।"

"पर क्यों ?"

"यह तो बतलाऊंगा ही, पर पहले यह बतलाओ कि खाना तो खाया भी जा सकता है, पर नींद आंखों में कैसे जबरदस्ती बुलाई जाए ?"

"तो जनाब रात-भर तारे ही गिनते रहे हैं ?"

"नहीं यार, तारे क्या गिनूंगा ? हां लाख प्रयत्न किया पर सो न सका।"

"इसपर तो मुझे, किसीका एक भला-सा शेर याद आ रहा है—

'नींद भी न आई, गिने भी न तारे,
गिनती भी भूल गए बिरहा के मारे।'"

"तो यार, तुम कवि हो गए ?" विशाल ने होंठों पर एक फीकी मुस्कान लाते हुए कहा।

"कवि क्या बनूंगा यह तो किसीसे सुन लिया था, हां पर तुम रातों-रात एक प्रसिद्ध लेखक अवश्य बन गए।"

"यह क्या ?" विशाल ने आश्चर्य से कहा।

"यह, यह कि तुम्हारी थीसिस तुम्हारे कहे अनुसार कल शाम को ही 'सेल' के लिए 'रिलीज' हुई और आज अभी-अभी दस बजे तक की खबर है कि कोई

सात सौ प्रतियां बिक गईं। उसके छपने की तो पहले ही से खबर थी ही, 'सेल' के लिए 'रिलीज़' होते ही प्रकाशक के यहां पाठकों और दुकानदारों का तांता लग गया। क्यों न हो, पुस्तक के पीछे प्रेरणा तो सुश्री रेखा की है।"

सुधीर की बात सुनकर विशाल का, अपनी तकलीफ को भूलने का प्रयत्न व्यर्थ हो गया और वे फिर पूर्ववत् खिन्न हो आए। उन्होंने आगे कहा, "मैंने एक बात का निश्चय किया है सुधीर।"

"क्या ?"

"मैं अपने प्रकाशक को अभी टेलीफोन से सूचित कर देता हूं कि वह मेरी पुस्तक की बिक्री रोक दे।" विशाल ने निश्चयपूर्ण शब्दों में कहा।

"पर, क्यों ?"

"वह इसलिए कि मैं थीसिस की सभी प्रतियों को खरीद लूंगा और उन सभी को जलाकर उनकी राख रेखा के यहां भेज दूंगा।"

"विचार तो सर्वथा मौलिक है, पर रेखा देवी को राख की ऐसी क्या आवश्यकता पड़ गई, वह भी जब वह आपको इतनी महंगी पड़ रही है ?"

"बात मज़ाक की नहीं सुधीर, मैं पूरी रात बेचैन रहा। किसी तरह हंसी-मज़ाक में मैं अपनी पीड़ा को भूलने का प्रयत्न कर रहा हूं पर मुझे लगता है कि यह चोट कुछ ऐसी लगी है जिसका घाव शायद ही भरे।"

"पर आखिर कुछ बताओ भी तो।" सुधीर ने कहा।

विशाल ने इसके बाद रेखा के उसके प्रति उपेक्षापूर्ण व्यवहार और उसके पिता द्वारा सुनी उसकी पुस्तक के प्रति प्रदर्शित अनादर की बात बता दी।

"बस !" सुधीर ने सारी बातें सुनने के बाद एक मुस्कराहट के साथ कहा।

"बस नहीं तो क्या ? तुम्हें तो हर बात छोटी ही लगती है।" विशाल ने खिन्न होकर कहा।

"मुझे हर बात छोटी नहीं, तुम्हे हर छोटी बात बड़ी लगती है।"

"तो तुम्हारे लिए यह बड़ी बात नहीं ?"

"एकदम नहीं, और कम से कम इतनी बड़ी तो नहीं कि इसके लिए खाना और सोना हराम हो जाए।"

"तो तुम्हारे लिए इस बात का कोई महत्त्व नहीं कि जिस लड़की को प्रेरणा बनाकर, जिसे प्रसन्न करने के लिए मैंने पूरी थीसिस लिखी, जिसे मैं अपना सब कुछ समझता आया, वह मेरी पुस्तक को देखकर जरा भी प्रसन्न नहीं

हो और उसके प्रति अनादर प्रकट करे। मैं पूछता हूं कि क्या यह बात इस बात का द्योतक नहीं कि उस लड़की को मेरी खुशी में खुशी नहीं और मेरे दु:ख में दु.ख नहीं ? तो क्या इसका मतलब यह नहीं हुआ कि उसे मुझसे कोई प्यार नहीं और अभी दो रोज पहले जो उसने अपने प्यार की स्वीकृति दी थी वह मात्र धोखा था।" विशाल एक सांस में ये सारी बातें बोल गया।

"इसका मतलब कुछ और हो या न हो, इसका मतलब बाल का खाल निकालना अवश्य है। मुझे यह पूछना है कि जब तक वह अपने मुंह से यह बात नहीं कहती या लिखकर नहीं देती कि वह तुमको नहीं चाहती या उसे किसी दूसरे से प्यार है तब तक तो तुम उसके 'आराध्य' और वह तुम्हारी 'प्रेरणा' है ही। एक छोटी-सी घटना को लेकर एक बहुत बड़ा अनुमान निकालना तो मेरी समझ में कोई बुद्धिमानी नहीं है।"

"तो तुम्हारा क्या विचार है ?" विशाल ने पूछा। उसके मुख पर प्रसन्नता की रेखाएं स्पष्ट हो आई थीं।"

"मेरा मतलब है कि तुम आज ऐसे समय रेखा के यहां जाओ जब उसके पिता ऑफिस गए हों। तुम रेखा से कुछ बातें करने का समय निकालो। जो तथ्य होगा स्वयं स्पष्ट हो जाएगा।"

विशाल को सुधीर की यह सलाह जंच गई और उन्होंने निश्चय किया कि वे शाम को कॉलेज के बाद रेखा से मिलेंगे।

इक्कीस

विशाल के अपने यहां से जाने के बाद वीणा ने परिस्थिति के आकस्मिक परिवर्तन पर गौर किया, पर उसे रेखा के अन्दर अपने और विशाल के प्रति उत्पन्न विरक्ति का कोई कारण नहीं दिखाई पड़ा। उसने सोचा, हो सकता है रेखा के घर में किसीने डांट-डपट की हो या दु:ख का कोई अन्य कारण हुआ हो, जिसके फलस्वरूप वह तकलीफ में हो। अत: उसने तय किया कि वह कॉलेज में उससे एकान्त में बातें करेगी।

पर, वीणा को कॉलेज में रेखा कहीं नहीं मिली। बारह बजे विशाल का क्लास था। उन्होंने क्लास लिया, पर वीणा ने देखा उनका मन उचटा-सा था

ग्रौर पढ़ाने में उनकी ज़रा भी रुचि नहीं थी। घंटी बजने में अभी 15 मिनट देर थी कि वे क्लास छोड़कर चले गए। वीणा, विशाल की यह स्थिति बर्दाश्त नहीं कर सकी। वह जानती थी कि विशाल की इस उद्विग्नता का कारण कल की किताब वाली घटना है ग्रौर ग्राज रेखा के क्लास न ग्राने से विशाल को विश्वास हो गया है कि उसने फिर उनकी उपेक्षा ग्रारम्भ कर दी है। वीणा ने क्लास छोड़कर रेखा के यहा जाने का निश्चय किया।

वीणा जब रेखा के यहा पहुंची तो रेखा का दरवाजा ग्रन्दर से बन्द था। उसने एक हल्का धक्का दिया तो दरवाजा खुल गया। पर दरवाजा खुलते ही यह देखकर उसके ग्राश्चर्य का कोई ठिकाना न रहा कि रेखा ग्रौर शरद ग्रामने-सामने ग्रत्यन्त करीब बैठे हैं। दरवाजा खुलने की ग्रावाज सुनते ही दोनों वीणा की तरफ ग्राश्चर्य से देखने लगे। वीणा कुछ मिनट तक किंकर्तव्यविमूढ़ हो दरवाजे पर खड़ी रही, फिर उसके ग्रागे बढ़ते ही शरद ग्रपनी कुर्सी से उठ खड़ा हुग्रा ग्रौर बोला—

"ग्राइए वीणा दीदी, ग्राज पहली बार मेरे दिमाग में यह बात ग्राई कि दुनिया गोल है। मैंने ग्रापके यहा जाना छोड़ दिया ग्रौर ग्रापने मेरे यहां, फिर भी हम मिल ही गए।" इसके बाद फिर घड़ी पर दृष्टि डालकर वह कुछ ग्राश्चर्य से बोला, "ग्ररे ग्रभी तो साढ़े बारह बजे हैं, ग्राप कॉलेज से ग्रभी ही चली ग्राईं ? ग्रो समझ गया।"

"क्या समझ गए ?" वीणा जो शरद के इस व्यवहार पर कुछ ग्राश्चर्य ग्रौर कुछ ग्लानि से भरी खड़ी थी, क्रोध से भरकर बोली।

"समझ गया विशाल, ग्राज कॉलेज नहीं गए होंगे।" शरद ने मुस्कराते हुए कहा ग्रौर फिर एक दृष्टि रेखा पर डाली जो ग्रब भी ग्रपनी कुर्सी पर चुप बैठी थी।

शरद की बात सुनकर वीणा को लगा जैसे कोई जलता हुग्रा तीर उसके दिल के बीच मे लगा ग्रौर उसका सारा शरीर एक ज्वाला में दग्ध हो उठा। वह कभी रेखा की तरफ देखती ग्रौर कभी शरद की तरफ। रेखा तटस्थ मुद्रा में ग्रपनी कुर्सी पर बैठी थी। शरद ग्रपने होठों पर एक मुस्कराहट के साथ ग्रपनी जगह पर खड़ा था। वीणा को यह ग्रपमान ग्रसह्य लगा ग्रौर उसे समझते देर न लगी कि शरद, रेखा को विशाल ग्रौर उसके बारे में कुछ उल्टा-सीधा समझा चुका है ग्रौर जो कुछ हो रहा है वह उसी सबका परिणाम है। पर रेखा की तरफ से वीणा को इस ग्रपमान की जरा भी उम्मीद नहीं थी। उसे लगा कि

परिस्थिति अब अनुमान से ज्यादा कठिन है। बड़ी मुश्किल से उसने रेखा की तरफ मुंह करके कहा—

"रेखा, मुझे तुमसे एक आवश्यक बात करनी है।"

"पर मुझे अफसोस है कि रेखा के पास आपकी बात सुनने का शायद समय नहीं है।" इसके पहले कि रेखा कुछ बोले, शरद बोल उठा।

"मिस्टर शरद ! मैं आपसे नहीं, रेखा से बोल रही हूं।" वीणा की आवाज में घृणा, क्रोध तथा दुःख के भाव स्पष्ट थे।

"इतना समझने की तो मुझे भी अक्ल है वीणा जी, कि आप किससे बोल रही हैं। पर आपको शायद अब तक यह बात समझ में नहीं आई कि मिस रेखा आपसे बोलना नहीं चाहती।" शरद इतनी-सी बात कहकर अपनी जगह पर बैठ गया।

"रेखा !" वीणा अब भी खड़ी थी।

"मुझे अफसोस है, हम लोग अभी एक आवश्यक बात कर रहे थे। तुम... आप बाद में मिलिए।" रेखा ने वीणा की तरफ देखते हुए कहा।

"रेखा, मैं फिर कभी नहीं मिलूंगी। मुझे केवल पांच मिनट का समय दो। मैं देखती हूं तुम अपना सत्यानाश कर रही हो।" वीणा ने कुछ व्यग्रता से कहा।

"सत्यानाश तो मेरा हो गया। हां, आपने जो कसर छोड़ी उसे पूरी कर रही हूं। बेहतर हो आप चली जाइए वरना हो सकता है, मैं जो नहीं चाहती वह भी कहना पड़े।" यह कहकर रेखा उठकर अन्दर चली गई। वीणा की आंखें एकाएक छलछला आईं और वह दरवाजे की ओर मुड़ गई।

वीणा के जाते ही रेखा फिर कमरे में आई और शरद को लगभग डांटते हुए बोली—

"मैंने तो कहा था कि अब सत्तरह तारीख के पहले हम नहीं मिल रहे हैं तो फिर तुम आज क्यों आए ? व्यर्थ, लोगों में संदेह पैदा करने से क्या लाभ ?"

"मैं तो नहीं आता, पर आज सुबह जो विशाल की किताब देखी और उसकी भूमिका पढ़ी तो मुझे भय हुआ कि तुम्हारा निर्णय कहीं बदल नहीं जाए।"

"लड़की जब अन्तिम निर्णय ले लेती है तो उसे रोकना और बदलना आसान नहीं, मिस्टर शरद ! और किताब और उसकी भूमिका को मुझसे क्या लेना-देना है ?"

"हां, यह तो मैं भी जानता हूं कि वह सब वीणा से सम्बद्ध है।" शरद झूठ बोला।

"यह कैसे ?" रेखा ने धीरे से कहा।

"कैसे क्या ? यह तो मेरे सामने की बात है। जब विशाल को आए यहां केवल चार-पांच दिन हुए थे, डा० सुवर्णो ने उन्हें अपने यहां चाय पर बुलाया। मैं वीणा के यहां पहले से ही उपस्थित था। पीते-पीते विशाल की चाय बिखर गई तो डा० सुवर्णो ने कहा, 'आपको अपनी पत्नी याद कर रही है।' इसपर विशाल बोले, 'पर मेरी पत्नी है ही कहां ?'

" इसपर वीणा ने कहा—'तो आपको कोई और'···वह शरमाकर चुप हो गई। इसपर विशाल ने कहा कि क्या इस तरह के विश्वास ठीक हैं तो डा० सुवर्णो ने उन्हें बताया कि वे इधर अरविन्द को पढ़ रहे थे और ऐसी बातों में वे बहुत विश्वास करने लगे हैं। इस पर वीणा ने भी हामी भरी थी और फिर उसके और विशाल के बीच लगभग घंटे-भर तक अरविन्द पर बहस होती रही थी और अन्त में विशाल ने कहा था कि उन्हें इस सबसे अपनी थीसिस में बहुत सहायता मिलेगी।"

"हूं।" रेखा ने कहा और एक लम्बी सांस खींची।

"अच्छा शरद, अब तुम जाओ। परसों हम अपने निर्णय के अनुसार मिल रहे हैं। इस बीच किसी प्रकार का सन्देह पैदा करना ठीक नहीं।" रेखा आगे बोली।

"अच्छा," शरद ने कहा और पास खड़ी रेखा के हाथ को पकड़ उसकी उंगलियों को अपने होठों तक ले जाना चाहा। रेखा ने हल्के झटके से हाथ को खींच लिया और बोली, "ऐसी शीघ्रता नहीं शरद, अभी तो सारी जिन्दगी पड़ी है।" और इसके बाद हाथ उठाकर उसने शरद को विदा किया।

बाईस

कॉलेज में प्रो० विशाल का मन नहीं लगा। उन्हें रह-रहकर कल शाम की घटना याद आती रही और उनका मन उखड़ा-उखड़ा रहा। रेखा को जब उन्होंने नहीं पाया तो उनका मन और उद्विग्न हो गया और उन्हें लगा कि रेखा

ने जान-बूझकर उनका क्लास छोड़ा है। सुधीर के समझाने से उन्हें सवेरे तो कुछ तसल्ली हो गई थी, पर रेखा जब क्लास में नहीं मिली तो उनका धैर्य समाप्त हो गया और उन्हें लगा जरूर ही रेखा का वह व्यवहार आकस्मिक नहीं था।

विशाल ने किसी तरह चार बजे तक का समय कॉलेज में बिताया और साढ़े चार बजते-बजते अपने घर वापस आ गए। इसके बाद मुंह-हाथ धोकर रेखा के यहां जाने के लिए प्रस्तुत हो गए।

वे रेखा के यहा पहुंचे तो रेखा बाहर के बरामदे में खुलने वाले कमरे के दरवाजे के बीच खड़ी थी। उसके साथ उसके घर की बगल की एक लड़की थी और दोनों किसी बात पर गौर से बातचीत कर रही थीं। विशाल को उस लड़की के चरित्र के विरुद्ध बहुत सारी बातें सुनने को मिली थीं और उन्हें यह देखकर बहुत दुःख हुआ कि रेखा की उसके साथ इतनी घनिष्ठता है, पर उनके स्वयं का दु:ख इतना बड़ा था कि इस बात पर ध्यान देने का उनको अवकाश ही नहीं था।

"रेखा !" विशाल ने बरामदे में खड़े होकर आवाज दी।

"पिताजी घर में नहीं हैं।" रेखा ने विशाल की तरफ बिना देखे ही उत्तर दे दिया और न उन्हें प्रणाम किया न बैठने को ही कहा।

"तुम तो हो, मुझे पिताजी से नहीं तुमसे काम है।" विशाल का स्वर आर्द्र था। पर उन्हें कोई उत्तर नहीं मिला।

"रेखा !" विशाल ने आवाज में अपने अन्तर का सारा प्यार उड़ेलकर फिर पुकारा।

"कह तो दिया, पिताजी घर में नहीं है।" और रेखा उस लड़की को खींचते हुए किवाड़ की ओट में चली गई।

"रेखा, मुझे तुमसे केवल एक बात कहनी है, केवल एक बात।"

विशाल ने इसके पहले कभी अपने को इतनी लाचार, बेबस और दीन नहीं पाया था।

"पूछिए।" एक सूखा-सा उत्तर था।

"तुमने मेरी थीसिस देखी ?"

"हां खूब देखी।"

"कैसी लगी ?" विशाल का हाल उस विद्यार्थी की तरह था जो परीक्षा-फल सुनने के लिए अपने स्कूल के अध्यापक के समक्ष खड़ा हो और एक-एक

सेकेण्ड का विलम्ब उसे एक-एक युग के समान लग रहा हो।

"कैसी लगी, रेखा ?" रेखा की ओर से उत्तर मे देरी होते देख विशाल फिर बोल पड़े।

"कैसी लगी यह मैं क्या जानू ? आप जाने, आपकी थीसिस जाने।"

रेखा ने टका-सा जवाब दिया। विशाल ने सोचा उस आवाज मे कुछ घमंड था, कुछ शेखी थी, कुछ उद्दंडता, कुछ तिरस्कार, पर प्यार ? वह नाम मात्र भी नहीं था। "आप जाने आपकी थीसिस जाने," ये पांच शब्द जैसे किसी रायफल की गोलियों की तरह उनके कलेजे में पांच स्थानों में छेद कर गए। वे वहीं बैठ गए और उन्हें लगा इन पाच छिद्रों से उनके शरीर का सारा खून एक क्षण के अन्दर ही बाहर आकर उन्हें सुन्न कर गया। उन्होंने बरामदे की दीवार पकड़ ली और फिर कोई दो मिनटों के बाद वे अपनी आवाज को यथासाध्य नियंत्रित कर बोले। पर आवाज फिर भी कांप गई—"रे···खा।"

"रेखा नहीं, मिस रेखा।" रेखा ने जवाब दिया। विशाल के घायल शरीर पर यह दोहरा प्रहार था 'रेखा नहीं, मिस रेखा···रेखा नहीं मिस रेखा···रेखा नहीं··।' उन्हें लगा उनका मस्तिष्क शून्य हो गया है और उसमें केवल एक ही आवाज गूंजती रही··· 'रेखा नहीं मिस रेखा···रेखा नहीं मिस रेखा···रेखा नहीं···।'

"रेखा, क्या तुमने मेरी थीसिस की भूमिका पढ़ी है ?" विशाल को लगा जैसे वे सपने मे बोल गए।

"नहीं, नहीं पढी और पढ़ूंगी भी नहीं।" रेखा की यह आवाज पहले की सभी आवाजों से तेज थी और विशाल को लगा कि दूर घाटी से कोई हल्की-पतली आवाज आई, 'नहीं-नहीं पढी है···' और इसके बाद ही उन्हें एक धड़ाके की आवाज सुनाई पडी और उन्होंने देखा सामने का खुला दरवाजा बन्द हो गया। दरवाजे के बाहर का लाल पर्दा कांप-कांपकर जैसे भीतर वाले की निष्ठुरता पर आश्चर्य कर रहा था। विशाल धीरे-धीरे फाटक की ओर बढ़े। उनके पैर कांप रहे थे। रेखा के फाटक मे सड़क कोई बीस कदम ही थी। सड़क पर आते ही सुधीर ने जो कॉलेज से लौट रहा था, विशाल को देख लिया और रिक्शा रोक-कर आवाज दी—"विशाल !"

विशाल ने आंखें फाड़कर सुधीर की तरफ देखा, फिर जैसे पहचानते हुए बोले—"सुधीर'।" सुधीर ने विशाल को रिक्शे पर खींच लिया और उनके बगल में बैठते ही पूछा—"क्या हुआ विशाल ?"

"सारे···सपने···टू···ट गए सुधीर।"

विशाल बड़बड़ाए और फिर चुप हो गए। रास्ते-भर विशाल और सुधीर में कोई बात नहीं हुई। सुधीर को परिस्थिति की गंभीरता का अन्दाज लग गया था और उसने विशाल को छेड़ना उचित नहीं समझा।

रिक्शे में सुधीर और विशाल, विशाल के निवास पर पहुंचे। अपने सोने के कमरे में जाकर विशाल बिना कुछ बोले अपने बिस्तर पर पड़ गए। सुधीर चारपाई की बगल में एक कुर्सी खींचकर बैठ गया।

"विशाल!" सुधीर ने धीरे से आवाज़ दी।

"सुधीर मैं अब जिन्दा नहीं रहना चाहता।" विशाल डूबे स्वर में बोले।

"विशाल, तुम पागल हो गए हो क्या? तुम्हारे जैसा व्यक्ति अगर ऐसी नादानी करेगा तो फिर दूसरे लोगों का क्या होगा?"

"तुम इसे नादानी मानते हो सुधीर? काश, तुम समझ पाते कि कृतघ्नता का जहर कैसी तेज होती है। मेरे रग-रग में यह जहर प्रवेश कर गई है सुधीर, मैं चाहकर भी जिन्दा नहीं रह सकता, जिन्दा रहकर भी मैं मुर्दा से बढ़कर रहूंगा। ओह, यह दुनिया क्या सचमुच इस तरह कृतघ्न और कपटी है सुधीर! ओह!"

"सुधीर, तुम समझ पाते आशाओं का लुटना कैसा असह्य होता है। मैंने क्या-क्या सोचा था सुधीर! मैंने सोचा था मेरे हाथ में चांद और सितारे झूलेंगे। मैं संसार का एक महान् दार्शनिक, एक महान् चिन्तक बनूंगा। मैंने अपनी कल्पना में रेखा के साथ पूरे संसार की सैर की है, हर जगह अपनी विजय के झंडे गाड़े हैं। रेखा के साथ आकाश की ऊंचाई और समुद्र की गहराइयां मापी हैं। रेखा के साथ मैंने अपने आदर्शों को, अपने सपनों को फलते-फूलते देखा है। पर आज, सुधीर, आज सारी दुनिया व्यर्थ दिख रही है, मुझे अपना भविष्य अंधकारमय लग रहा है।"

"तुम्हारा भविष्य बहुत उज्ज्वल है विशाल, पर तुम जिसे महत्त्व नहीं देना चाहिए उसे ही महत्त्व देकर अपने भविष्य की हत्या कर रहे हो। क्या रखा है इस रेखा में? है तुम्हारे पासंग में भी वह? वह नहीं चाहती है तो न चाहे तुम्हें। उससे लाख गुना अच्छी चाहने वाली मिलेगी कि नहीं?"

"ओह! सुधीर, मुझे ये सब बातें व्यर्थ लगती हैं। मेरी समझ मेरा साथ नहीं दे रही! तुम मुझे अकेले छोड़ दो। वहस से मैं पागल हो जाऊंगा।" विशाल ने लगभग गिड़गिड़ाते हुए कहा।

"पर मैं तुम्हें ऐसी स्थिति में अकेले नहीं छोड़ सकता।"

"सुधीर, तुम मुझे पागल कर दोगे, तुम्हारे यहां रहने से मेरा मस्तिष्क असंतुलित ही बना रहेगा और लाख प्रयत्न करके भी मैं अपने को बहला न सकूंगा। पर तुम विश्वास रखो मैं आत्महत्या नहीं करूंगा। मुझे अब भी रेखा से आशा है, मैं अन्तिम प्रयत्न करता हूं और अगर वह भी सफल नहीं हुआ तब भगवान जाने।"

"पर तुम्हारा विश्वास कैसे हो?"

"विश्वास तो होगा ही। मैं एक पत्र लिखता हूं और उसमें मैं उससे अन्तिम रूप से पूछता हूं कि मुझसे उसका कोई सम्बन्ध है या नहीं। अभी तक तो उसने मेरा केवल मूक अपमान ही किया है। जब तक वह स्पष्ट रूप से अपने को मुझसे अलग नहीं कर लेती तब तक तुम्हारी कल की बात के अनुसार मैं किसी बड़े परिणाम पर कैसे पहुंच सकता हूं।"

"यह बात ठीक है विशाल और मुझे उम्मीद है, इसमें तुम्हें सफलता भी मिलेगी। मैं नहीं समझता कि रेखा तुम्हें छोड़ने की गलती करेगी।" यह कह-कर सुधीर उठ खड़ा हुआ और चलते हुए बोला—"तो अभी मैं जाता हूं विशाल। कल सुबह मिलूंगा।"

तेईस

आज सत्तरह तारीख की सुबह थी। सुधीर, कोई आठ बजे अपने ड्राइंगरूम में बैठा सुबह का अखबार पढ़ रहा था। सामने की छोटी मेज़ पर नौकर चाय का प्याला रख गया था। वह चाय का प्याला उठाकर अपने होंठों से लगाना ही चाहता था कि बीच के दरवाजे से उसकी पत्नी आ पहुंची और आते ही बोली—"सुना तुमने?"

"क्या?" सुधीर के बाएं हाथ में अखबार था और दाहिने में चाय का प्याला जो उसके होंठों से कोई दो इंच की दूरी पर आकर रुक गया था।

"वह जो है न सुशान्त वन्द्योपाध्याय—अरे वही रेलवे कॉलोनी वाले, उनकी लड़की, कॉलेज के किसी लड़के के साथ भाग गई।" वह सामने के सोफा पर बैठते हुए बड़े इत्मीनान से बोली।

"क्या रेखा भाग गई ? कब ? कहां ? किसके साथ ?" सुधीर जो सोफे पर बैठा था, हड़बड़ाकर उठ गया। उसके हाथ का प्याला फर्श पर गिरकर टूट गया। उसकी पैंट की टांगें नीचे से चाय के छींटों से भीग गईं। पर इस सब पर बिना ध्यान दिए, वह दरवाजे की तरफ भागा। उसकी पत्नी लीला की आंखें आश्चर्य से फटी जा रही थीं और वह अपनी जगह पर यंत्रचालित-सी खड़ी होकर सड़क पर बेतहाशा भागते जा रहे सुधीर की ओर देख रही थी। लीला को मालूम था कि सुशान्त वन्द्योपाध्याय की लड़की से सुधीर के अन्तरंग मित्र विशाल को प्यार था, पर रेखा के भाग जाने की ऐसी प्रतिक्रिया सुधीर पर होगी इसकी आशा उसे नहीं थी।

सुधीर के घर से विशाल का मकान कोई आधा मील पड़ता था। इस दूरी को उसने दौड़ते हुए तय किया और रास्ते-भर सोचता रहा कि वह विशाल को कैसे संभालेगा। उसे विश्वास था कि यह खबर अभी उन तक नहीं पहुंची होगी, क्योंकि विशाल बिना आवश्यक कार्य से बाहर नहीं निकलते थे और फिर उनके यहां आने वालों की संख्या भी बहुत ज्यादा नहीं थी जिससे उन तक इस समाचार को इतना शीघ्र पहुंचने की उम्मीद हो ! यद्यपि सुधीर ने रेखा के भागने के बारे में विस्तार से कुछ नहीं पूछा था, फिर भी उसे विश्वास था कि वह भागी होगी तो शरद के साथ ही। सुधीर की समझ में नहीं आ रहा था कि वह विशाल को किस रूप में यह समाचार देगा। समाचार देना भी आवश्यक था, क्योंकि अगर अब तक विशाल तक बात नहीं भी पहुंची होगी तब भी कॉलेज जाने पर यह बात उनसे छिपी नहीं रहेगी और फिर रेखा के शरद के साथ भाग जाने की बात सुनकर विशाल पर क्या प्रतिक्रिया होगी यह सोचकर ही उसका जी बेतरह घबड़ाने लगा। 'हे भगवान, आखिर यह दिन भी आ ही गया।' सुधीर ने सोचा और एक क्षण के लिए उसे लगा उसके पैर जमीन से चिपक गए हैं और वह आगे नहीं बढ़ सकते। पर किसी तरह उसने अपने मन को ढाढ़स दिया और फिर अपनी राह पर बढ़ चला।

"मोहन ! मोहन !" विशाल के फाटक पर पहुंचकर सुधीर ने नौकर को आवाज दी, मोहन ने दरवाजा खोला और सुधीर ने देखा कि उसकी आंखों से आंसू बह रहे हैं।

"क्या हुआ रे ?" सुधीर ने मोहना के दोनों हाथों को आगे से पकड़कर झकझोर दिया। पर जवाब देने के बदले वह फफककर रो पड़ा। सुधीर को लगा उसका मस्तिष्क उड़ा जा रहा है। उसके पैरों के नीचे की धरती जोरों से कांप

रही है, जैसे कोई बहुत बड़ा भूचाल आ गया हो। वह
अपेक्षकर आगे बढ़ा और उसने देखा विशाल के रहने के
पहले किसीकी फटी-फटी आंखों की तरह खुले पड़े हैं। कमरे
उनकी किताबें, कमरे की सतह पर जहां-तहां बिखरी पड़ी
बेतरतीब, कुछ पलंग पर और कुछ फर्श पर फैले पड़े थे।
शिव और काली की तस्वीरें जमीन पर चूर-चूर होकर बिख
"विशाल ऽऽऽ!" सुधीर कमरे में चीखा और कमरे की
के रूप में उससे भी ज्यादा तेज आवाज में चीख पड़ी—
सुधीर दोनों हाथों से अपना सिर दबाकर वहीं बैठ गया। उ
से उसे समझते देर न लगी कि विशाल एक अत्यन्त ही विक्षिप्त
से गुजर चुके हैं और पता नहीं वे अब कहां हैं—जिन्दा भी हैं

"विशाल!" सुधीर के मुख से अनायास एक दर्द-भरी आव
उसकी आंखों से आंसू बह चले। सुधीर ने आज के पहले अपने
और कभी भी अनुभव नहीं किया था और उसे लगा अब उस
कोई अर्थ नहीं रहा।

"मालिक भाग गए, सुधीर बाबू।" मोहन जो रोते-रोते व
पर आ खड़ा हुआ था, अपने कंधे पर रखी मैली चादर से
कोरों को पोंछते हुए बोला।

"कहां?" सुधीर ने डूबती आवाज में पूछा। उसकी दोनों
प्रश्न-चिह्न बनकर मोहन की आंखों में घुस जाना चाहती थीं।

"कैसे जानूं बाबू? मैंने रास्ता रोकना चाहा तो मुझे धक
कर दिया। वे आधी रात तक अपने कमरे का दरवाजा बन्द
करते रहे। मालिक पागल हो गए बाबू।" और मोहन सिसक

"पागल! नहीं-नहीं ऐसा नहीं हो सकता। विशाल पागल न
विशाल पागल नहीं हो सकते। मोहन! बोलो तो विशाल कब
कब गए? प्रो० विशाल कब गए मोहन?"

"आधी रात को बाबू। ठीक आधी रात को। घंटाघर ने
और मालिक निकल गए।" मोहन सिसकियों के बीच बोला।

"इसके पहले कुछ हुआ? कोई आया था? विशाल कहं
सुधीर एक ही सांस में कई प्रश्न पूछ गया।

"कहीं नहीं गए थे बाबू। पर हां एक आदमी आया था। वि

था बाबू । उसके हाथ में एक कागज था ।"

"कागज ? कहां, कहां है कागज ?" सुधीर चौंखा और फिर पागलों की तरह टूट पड़ा । बिखरी हुई किताबों और सभी सामानों को उलट-पुलट दिया और अन्त में जब उसे कुछ भी नहीं मिला तो उसने विशाल के बिछावन और चादर को पलंग से उतारकर मोहन की तरफ फेंक दिया ।

"यह रहा बाबू ।" एक छोटा-सा कागज़ का टुकड़ा जो मुड़-सिमटकर और छोटा हो गया था, मोहन के हाथ में था । सुधीर ने पागलों की तरह झपटकर वह कागज, मोहन के हाथों से छीन लिया । वह रेखा के हाथों का लिखा एक अत्यन्त छोटा पत्र था—

"विशाल, मुझे आपसे कोई मतलब नहीं । मुझे बहुत प्रसन्नता होगी यदि आप मुझे, फिर कोई पत्र न लिखें या मुझसे या मेरे परिवार के किसी सदस्य से मिलने का प्रयत्न न करें—रेखा ।"

सुधीर पत्र को वहीं फेंककर दरवाजे के बाहर लपका । दरवाजे के बाहर आते ही उसे डा० सुवर्णो मिल गए । उनके मुख का रंग उड़ा हुआ था । सुधीर को देखते ही डा० सुवर्णो चिल्ला पड़े—"गजब हो गया सुधीर, गजब हो गया । बेटी वीणा को बेहोशी के दौरे पर दौरे आ रहे हैं । सवेरे से ही दो-दो डाक्टर लगे हैं, पर अब तक कोई विशेष लाभ नहीं । कैसी मनहूस सुबह है यह । सवेरे, किसीने आकर वीणा को खबर कर दी कि रेखा रात को शरद के साथ भाग गई और आधी रात को विशाल पागलों की तरह सड़क पर भागते देखे गए और फिर न जाने कहा गायब हो गए । इस खबर को सुनते ही वीणा बिटिया बेहोश हो गई और तभी से उसे दौरे पर दौरे पड़ रहे हैं । मैं तुम्हें खोजते-खोजते तुम्हारे घर गया, शायद कुछ सहायता कर सको ।"

"मुझे अफसोस है, डा० सुवर्णो, मैं इस समय आपकी कोई सहायता करने योग्य नहीं हूं ।" और यह कहकर सुधीर बिना किसी तरफ देखे अपनी राह पर बढ़ गया ।

सुधीर घर पहुंचा तो उसकी पत्नी कमरे में ही बैठी थी । सुधीर का चेहरा देखते ही लीला के मुख से एक चीख निकल गई—"क्या हुआ ? ऐसा क्यों लग रहे हो ? लगता है तुम्हारे चेहरे पर खून ही नहीं ।"

सुधीर कटे हुए पेड़ की तरह सोफे पर धम से बैठ गया और बोला—"सब समाप्त हो गया लीला । रेखा शरद के साथ भाग गई । विशाल लापता हो

गए। वीणा को मूर्छा के दौरे पर दौरे पड़ने लगे और सुधीर का सब कुछ,… हां…हां…सब कुछ जाता रहा।"

लीला सुधीर की बगल में बैठ गई और कुछ घबराहट-भरे शब्दों में बोली, "डा० सुवर्णो आए थे। कह रहे थे शायद विशाल पागल हो गए।"

"भगवान के लिए ऐसा न कहो। डा० विशाल पागल नहीं हो सकते। मेरा विशाल पागल नहीं हो सकता लीला, मैं उसे खूब जानता हूं। तुम उसे नहीं जानतीं। उसमें आन्तरिक बल है, लीला। विशाल हा, हां। मेरा विशाल, इस संकट को झेल जाएगा। वह पागल नहीं होगा। वह आत्महत्या नहीं करेगा। नहीं-नहीं ऐसा कभी नहीं हो सकता। पर, रेखा ने अच्छा नहीं किया लीला।" यह कहकर सुधीर ने लीला के कंधे पर अपना सिर टिका दिया और अपने को नियन्त्रित करने का प्रयास करने लगा।

चौबीस

उस मनहूस सुबह को बीते आज पूरे नौ साल हो गए। विशाल का आज तक कोई पता न चला। कलकत्ते के एक विमेन्स कॉलेज की पोर्टिको में एक बड़ी-सी कार रुकी। चपरासी ने दौड़कर दरवाज़ा खोला और 'लेडी-प्रिंसिपल' के हाथों मे फाइल ले ली।

"डाइरेक्टर आ गए?" लेडी प्रिंसिपल ने छोटा-सा सवाल किया और उत्तर मे चपरासी ने तनकर एक सलामी दी—"यस मैडम।"

"तुम उम्मीदवारों को प्रतीक्षा-गृह में बैठने को बोलो और कहो इन्टरव्यू ठीक साढ़े दस बजे आरम्भ हो जाएगा।" लेडी प्रिंसिपल ने चपरासी को आदेश दिया और अपने ऑफिस का पर्दा हटा अन्दर चली गई।

"हलो प्रिंसिपल।" अन्दर बैठे डाइरेक्टर ने उठकर प्रिंसिपल का स्वागत किया और फिर दोनों एक बड़े-से टेबुल के किनारे, दो कुर्सियों पर बैठ गए।

"कितनी जगहें रिक्त हैं प्रिंसिपल?" डाइरेक्टर ने सवाल किया।

"केवल एक।" प्रिंसिपल ने जवाब दिया और फिर फाइल खोलकर कुछ देखने लगी।

"उम्मीदवारों में सबसे अच्छी योग्यता किसकी है?" डाइरेक्टर ने दूसरा प्रश्न किया।

"देख रही हूं।" लेडी प्रिंसिपल ने जवाब दिया। उसकी आंखें एक क्षण के लिए चमक गईं।

"क्या बात है प्रिंसिपल?" डाइरेक्टर ने प्रश्न किया और जवाब में प्रिंसिपल ने सबसे अच्छी योग्यता वाली लड़की का नाम लाल स्याही से मार्क कर फाइल डाइरेक्टर की ओर बढा दी। डाइरेक्टर की आखें भी एक क्षण को चमकी और लेडी प्रिंसिपल की आखों से जा मिली। जवाब में दाहिने हाथ के पास लगे बिजली का बटन दबाया और घंटी बजते ही बाहर दरबान पर्दा हटाकर अन्दर आ खड़ा हो गया।

"उम्मीदवार नं० चार को आवाज दो।" प्रिंसिपल ने आज्ञा दी और दूसरे ही क्षण दरवाजे के बाहर दरबान की आवाज सुनाई पड़ी—"रेखा बन्द्योपाध्याय एम० ए०!"

"प्रिंसिपल और डाइरेक्टर की आखें फिर एक बार टकराई पर दोनों की आंखों में प्रश्न ही था, जवाब किसीमें नहीं।

उम्मीदवार नं० चार ने पर्दा हटाकर दरवाजे के अन्दर कदम रखा और डाइरेक्टर और प्रिंसिपल की आखें कुछ आश्चर्य, कुछ आनन्द और अविश्वास के साथ एक साथ फट गई।

उम्मीदवार ने दूसरा कदम बढ़ाया ही था कि प्रिंसिपल और डाइरेक्टर यंत्रचालित से एक साथ अपनी कुर्सियों से उठ गए और दोनों के मुख से एक साथ निकल गया —"रेखा!!"

"वीणा!!!" उम्मीदवार के मुख से आश्चर्य-भरी आवाज निकली और वह अपने हाथ की फाइल फेंककर लेडी प्रिंसिपल के गले से जा लगी। डाइरेक्टर डा० सुधीर अपनी कुर्सी के पास ज्यों के त्यों खड़े रहे। उनकी दोनों आखें पानी से भर आई थी।

"इन्टरव्यू आज नहीं होगा। उम्मीदवारों को कल आने को बोलो।" प्रिंसिपल वीणा ने चपरासी को आदेश दिया और फिर रेखा को लेकर, अपनी आखों को रूमाल से पोंछते हुए अपनी गाड़ी में जा बैठी।

"हां तो रेखा, यह बताओ तुम नौ साल तक कहां रही?" जैसे ही सुधीर, वीणा और रेखा वीणा के ड्राइंगरूम में पहुंचे, वीणा ने बिना किसी भूमिका के आरम्भ कर दिया।

"मेरी कहानी बहुत छोटी है वीणा। "रेखा ने कुछ झिझक के साथ आरम्भ किया, "शरद के साथ जाने के बाद कोई दस रोज मैं उसके साथ रही। इस बीच

मैं बार-बार उससे विवाह करने का प्रस्ताव करती रही, पर वह हमेशा कोई न कोई बहाना बनाता रहा। उसपर संदेह तो मुझे पहले ही से था और इसीलिए प्रारम्भ से ही मैं सजग भी थी। मैंने कभी भी उसे अपने बहुत समीप नहीं आने दिया। दस दिनों के बाद मैं शरद से अलग हो गई और अपने लिए नौकरी ढूंढ़ने लगी?"

"और शरद का क्या हुआ?" सुधीर और वीणा ने लगभग एक साथ पूछा।

"उस समय वह कहां गया, पता नहीं। अब इधर सुना है, वह सेना में है।" रेखा ने जवाब दिया और फिर अपनी कहानी आगे बढ़ाई—"मुझे दो-चार दिनों के प्रयत्न से बम्बई के एक प्राइवेट फर्म में काम मिल गया और मैं अब भी उसी फर्म में हूं। मैंने प्राइवेट रूप से बी० ए० किया, फिर गत साल एम०ए० भी पास किया। भगवान की कृपा कहो, द्वितीय श्रेणी में अच्छा स्थान आ गया। कोई 8-9 रोज़ पहले पेपर में तुम्हारे कॉलेज के लिए एक लेक्चरर की आवश्यकता का विज्ञापन पढ़ा। पर मालूम रहता कि तुम्हीं इसकी प्रिंसिपल हो और प्रो० सुधीर इसके डाइरेक्टर तो मैं शायद नहीं आती।"

"प्रो० सुधीर नहीं, डा० सुधीर कहो," वीणा ने टोका, "हमारे प्रोफेसर साहब ने बहुत परिश्रम से इतिहास में पी-एच० डी० की डिग्री ली है। कहते थे डा० विशाल की बड़ी इच्छा थी कि मैं डाक्टर बन जाता और जब वे न रहे तो उनकी इच्छा तो रहनी ही चाहिए।"

"क्या कहा विशाल नहीं रहे?" रेखा चीख पड़ी।

"जब नौ साल तक उनका कोई पता नहीं चला तो अब क्या कहा जाए?" वीणा ने कहा और उसकी आंखें छलछला आईं।"

"कहां गए विशाल?" रेखा ने फिर लगभग चीखकर प्रश्न किया।

"डा० विशाल का पता लग गया है, वे अच्छी तरह हैं। मुझे आज ही ज्ञात हुआ है, पर मैं इस बात को अकस्मात् ही प्रकट करना चाहता था।" डा० सुधीर ने जैसे बम-विस्फोट किया।

'क्या?" वीणा और रेखा दोनों समान आश्चर्य से लगभग अपनी कुर्सियों से उठती हुई चिल्ला पड़ीं।

"हां, पर मैं अभी तब तक उस बात को विस्तार से नहीं बताऊंगा जब तक लेडी प्रिंसिपल वीणा, अपनी सफलता के राज़ को रेखा पर नहीं खोलती।" विशाल ने गम्भीरता से कहा।

"पर आप इतनी महत्त्वपूर्ण बात को इतनी देर तक रोक कैसे सकते हैं,

यह तो बहुत बड़ा अन्याय है।" वीणा ने जिद् की।

"यह अन्याय हो अथवा न्याय, पर यदि आप चाहती हैं कि आपको यह भेद मालूम हो जाए तो आप जितनी शीघ्रता करेंगी उतना ही अच्छा और, इसका सबसे बड़ा कारण यह है कि जब तक आप रेखा पर अपना राज खोलती नहीं तब तक मेरे रहस्योद्घाटन का एक बहुत बड़ा लक्ष्य पूरा ही नहीं होगा।" सुधीर ने गंभीर होकर कहा।

"आओ रेखा, शीघ्रता करो।" वीणा ने लाचार होकर रेखा का हाथ खींचा, जो न जाने फटी-फटी आंखों से कहां देख रही थी।

वीणा रेखा को खींचते हुए अपने सोने के कमरे में ले गई और एक सूट-केस खोल, कपड़ों के बीच से एक लिफाफा निकालकर रेखा को देते हुए बोली—"लो रेखा यही है मेरी सफलता का रहस्य।"

"वीणा ! !" लिफाफा खोलते ही रेखा के मुख से एक चीख निकल पड़ी और उसके हाथ से छूटकर लिफाफा फर्श पर गिर गया।

"हां रेखा, मेरी सफलता का रहस्य—विशाल का यह चित्र है। इस चित्र को मैंने एक पत्रिका से फाड़कर रख लिया था। चित्र के बल पर ही बी०ए० की परीक्षा मे प्रथम स्थान प्राप्त किया। एम० ए० में प्रथम श्रेणी लाई। हां, हां, यही वह प्रेरणा है जिसके सहारे मैं लगातार अपने कर्त्तव्य-पथ पर बढ़ती रही और आज मैं उसी कालेज में प्रिंसिपल हूं, जिसमें आज से केवल चार साल पहले मैं लेक्चरर बनकर आई थी।"

"वीणा, मैं पागल हो जाऊंगी। मुझसे यह सब बर्दाश्त नहीं हो रहा, तुमने मुझे धोखा दिया वीणा।" रेखा जो अपने सिर को दोनों हाथों से पकड़कर बिछावन पर बैठ चुकी थी, बोली।

"धोखा मैंने तुम्हें नहीं दिया रेखा ! धोखा मैंने किसीको नहीं दिया," वीणा ने आरम्भ किया, "धोखा तुम स्वयं अपने आपको देती रही। रेखा, मैंने सदा तुम्हारे हित की बात की। तुम्हें अच्छा रास्ता दिखाने का प्रयास किया। पर तुम अन्त तक नहीं संभली।"

"तुम विशाल से प्यार करती थी वीणा। तुमने···।" रेखा सिसकियों के बीच बोली और फिर गला रुंध जाने से आगे नहीं बोल सकी।

"प्यार ? हां रेखा, मैं विशाल से प्यार करती थी और वह मैं आज भी करती हूं। पर, मेरा प्यार वैसा नहीं था जैसा तुम समझती हो। रेखा, मैंने अपने प्यार की बात विशाल के सामने कभी अपनी जीभ पर नहीं लाई।

मैं जानती थी कि विशाल को तुमसे प्यार है और मैंने सदा यह प्रयत्न किया कि तुम विशाल के समीप आ सको। मैं विशाल को सही अर्थ मे प्यार करती थी रेखा, उनके सुख मे ही मेरा सुख था और जब वे तुम्हें प्यार करते थे तो मेरा यह कर्त्तव्य था कि मैं तुम्हें उनके समीप लाकर उन्हे सुखी बना सकू।"

"यह झूठ है वीणा। यह झूठ है। मैंने अपने कानों से तुम्हें विशाल से प्यार की बातें करते सुना था। वे तुमसे कह रहे थे कि उनका प्यार वैसा ही है जैसा पहले था।" रेखा की सिसकियां बन्द नही हो पा रही थी।

"यही न, तुम स्वयं अपने को धोखा देती रही हो रेखा! जो बात तुम कह रही हो वह मुझे आज भी याद है। विशाल यह बात मेरे प्यार के संबंध मे नहीं, तुम्हारे प्यार के सम्बन्ध मे कह रहे थे। काश रेखा, तुमने कभी मुझसे यह बात बताई होती तो आज यह बात न होती।"

"पर विशाल तुमको प्यार करते थे वीणा। तुम अपने प्यार को भले ही जुबान पर न ला सकी हो, पर विशाल तुम्हें दिल से चाहते थे।" रेखा की सिसकियां कुछ कम हो गई थी और वह अपनी आंसू-भरी लाल आंखों से वीणा की तरफ टकटकी बांधकर देख रही थी।

"भगवान के लिए ऐसा नही कहो रेखा!" वीणा ने आरम्भ किया, "विशाल देवता थे। उनके मन में एक साथ दो लडकियों का ख्याल आ ही नहीं सकता था। उनके दिल मे केवल तुम ही थी रेखा। काश, उस विशाल हृदय का एक कोना भी कही किसी और के लिए रिक्त होता!"

"वीणा!!" रेखा ने कुछ हर्ष, कुछ आश्चर्य और कुछ पीड़ा मिश्रित शब्दों में कहा।

"हां रेखा, विशाल महान् थे। तुम्हारे सिवा किसी और का ख्याल उनके लिए कठिन था। कहां मिलता है इतना प्यार रेखा? कहा मिलती है ऐसी तन्मयता? केवल एक बार, हा केवल एक बार मैंने उनपर एक पत्र के द्वारा अपनी भावनाओं को प्रकट किया था और उनके उत्तर ने मेरे मुख को सदा के लिए बन्द कर दिया।"

"वीणा!" रेखा दूसरी बार उसी आवाज मे बोली। उसकी सिसकियां पूर्णतः रुक गई थी, पर आंखें अभी भी गीली थीं।

"हा रेखा, वह पत्र आज भी मेरे पास सुरक्षित है। तुम्हें शायद याद होगा एक बार मैंने तुमसे कहा था विशाल का हस्ताक्षर तो मेरे बक्से में दो साल से

कैद है। यह वही हस्ताक्षर था रेखा, और लो देखो वह, यह रहा। इतना कह-कर वीणा ने एक दूसरा लिफाफा निकालकर रेखा को दे दिया। एक छोटा-सा पत्र था जिसे वीणा के हाथ से छीनकर रेखा एक क्षण मे पढ़ गई···

"मुझे माफ करना। तुमने गलत व्यक्ति को चुन लिया। मैं एक जगह दो व्यक्तियों के लिए स्थान नही बना सकता। मैं रेखा को प्यार करता हू। आशा है तुम भविष्य में ऐसी कोई कमजोरी नही दिखलाओगी।

—विशाल

चिट्ठी पढ़कर रेखा वीणा के गले जा लगी। "मैं मूर्खा हूं वीणा, मैं नीच हूं।" रेखा की आवाज फिर भर आई थी। आखें पूरी तौर से छलछला आई थीं और उसे लगा कोई उसका दिल दोनों हाथों से पकडकर दबा रहा है।

"तुम देवी हो वीणा, और विशाल देवता।" रेखा ने किसी तरह कहा और ठीक इसी बीच सुधीर जो बाहर दरवाजे पर खडा था अन्दर आ गया।

"मैंने सब कुछ सुन लिया है," सुधीर ने आरम्भ किया, "अब वह समय आ गया है, कि मैं विशाल के पत्र को आप लोगों के समक्ष रखू। इसीमे सभी बातें स्पष्ट हो जाएंगी।" इतना कहकर सुधीर ने एक लिफाफा रेखा की ओर बढ़ा दिया।

"तुम्ही पढकर सुनाओ वीणा, मैं शायद पढ नहीं सकू।" रेखा के यह कहने पर वीणा ने पत्र को ऊंचे स्वर में पढ़ना आरम्भ किया—

सागर-पार

मेरी अच्छी रेखा,

मुझे प्रसन्नता है कि मेरे इस प्रकार के सम्बोधन पर आपत्ति करने के लिए तुम यहां नही हो। मुझे इस बात की भी प्रसन्नता है कि मैंने सुधीर और वीणा दोनो के सामने यह बात सिद्ध कर दी कि सच्चे प्यार से बढ़कर कोई प्रेरणा नहीं है और सच्चे प्यार का वासना से कोई सम्बन्ध नही।

आज मैं तुमसे हजारो मील दूर, लन्दन की एक बडी लायब्रेरी में बैठा तुम्हें यह पत्र लिख रहा हूं। मैंने इस बीच तुम्हें कोई पत्र नही लिखा, पर तुम्हारी प्रेरणा से मैंने आज तक प्रगति की अनेक ऊंचाइयों को पार कर अपने लिए बहुत बड़ा स्थान बना लिया है। मैंने यहां आकर अपना नाम बदल लिया है, इसीलिए, तुम लोग मुझे नही जानते, पर मैं आज विश्व का एक बहुत बडा दार्शनिक हूं और मेरे सिद्धान्तों पर दूसरे दार्शनिकों ने बड़े-बड़े अनुसन्धान किए हैं।

यह सब तुम्हारी प्रेरणा है, रेखा ! हां, यह सब एक सच्चे और विशुद्ध प्यार की प्रेरणा है, वह प्यार जो वासना के दलदल से मुक्त रहा। मुझे उम्मीद है, तुम मेरे इस अन्तिम पत्र के लिए मुझे क्षमा करोगी। भारत के किसी अखबार में सुधीर के कॉलेज के किसी 'फंकशन' का समाचार पढ़ा था। वहीं से पता लेकर मैं यह पत्र उसके माध्यम से तुम्हारे पास भेज रहा हूं।

···आशा है यह पत्र तुम तक पहुंच जाएगा और मुझे यह भी उम्मीद है कि मुझे जिन्दा समझ तुम्हें बहुत तकलीफ नहीं होगी।

अब भी तुम्हारा ही—
विशाल

पत्र समाप्ति के बाद रेखा जोर से फफककर रो पड़ी और सुधीर ने उसके सिर पर अपना हाथ फेरते हुए कहा, "मैंने कभी कहा था न रेखा, भगवान की झोली में सौभाग्य के कुछ ही कण तो थे, जिनमें कुछ को उन्होंने विशाल की झोली में डाल दिया और बाकी को वीणा की। अब चलो, हम, इस जिन्दगी को भगवान जिस रूप में चाहता है, उसी रूप में ढोएं।"

● ● ●

मुद्रक : राम प्रिन्टर्स, रोहतास नगर, शाहदरा-दिल्ली-110032 211080